वर्ष : 8
अंक : 61

संत श्री आसारामजी आश्रम
द्वारा प्रकाशित

जनवरी
1998

ऋषि प्रसाद

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज

वर्ष : ८
अंक : ६१
९ जनवरी १९९८

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८० ००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.
फैक्स : ७५०५०१२

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८० ००५ ने पारिजात प्रिन्टरी एवं भार्गवी प्रिन्टर्स, राणीप, अमदावाद में तथा पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

अमदावाद आश्रम के फोन नंबर बदल गये हैं। नये नंबर इस प्रकार हैं : (079) 7505010, 7505011.

प्रस्तुत है...

१. काव्य-गुँजन — २
★ ऐसी राह दिखाओ सतगुरु
★ हे प्राणप्रिय गुरुवर...
★ अमृत बनाने आ रही हूँ...

२. साधना-प्रकाश — ३
★ सावधानी से चित्त की सुरक्षा

३. भागवत-अमृत — ५
★ महामुनि गोकर्ण

४. श्रीराम-वशिष्ठ संवाद — १२
★ मोक्ष के चार द्वारपाल

५. जीवन-सौरभ — १४
★ प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

६. प्रेरक प्रसंग — १७
★ सिर दीजे सद्गुरु मिले...

७. परमहंसों का प्रसाद — २०
★ श्रीमद् आद्य शंकराचार्यविरचितं गुर्वष्टकम्
★ संत-प्रसाद की महिमा

८. युवा जागृति संदेश — २२
★ भारतीय संस्कृति की गरिमा के रक्षक : स्वामी विवेकानन्द

९. सर्वदेवमयी गौमाता — २३
★ गौमाता : अनवरतपोषिका

१०. आरोग्यनिधि — २५
★ तुलसी ★ सूखा मेवा : बदाम ❊ अखरोट

११. आपके पत्र — ३०

१२. संस्था समाचार — ३१

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग : ATN चैनल पर रोज सुबह ७-३० से ८. ❊ YES चैनल पर रोज सुबह ८-३० से ९. ❊ दोपहर १-३० से २.

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

ऐसी राह दिखाओ सतगुरु

ऐसी राह दिखाओ सतगुरु भव-सागर तर जाऊँ।
कोई नहीं है जग में अपना, किसको मीत बनाऊँ॥
कदम-कदम पर ठोकर खाई पाँव पड़े हैं छाले।
यह जीवन तो व्यर्थ गँवाया खुले न आस के ताले॥
मैं बन्धन में ऐसा उलझा चाहूँ निकल न पाऊँ।
ऐसी प्रीत जगाओ मन में तेरे दर पर आऊँ॥
मैं क्या जानूँ आरती-वन्दन मैं तो हूँ अज्ञानी।
दे दो मुझको दान ज्ञान का मैंने झोली तानी॥
सूख गया है ताल हृदय का जल कैसे भर लाऊँ।
ऐसा राग सिखा दो मुझको तेरे ही गुण गाऊँ॥

- प्रकाश 'सूना'
मुजफ्फरनगर

*

हे प्राणप्रिय गुरुवर...

हे प्राणप्रिय गुरुवर तुमको
शत-शत कोटि नमन हमारा है ...
आगमन आपका पावन मन चंदन महका दिया।
बसन्ती बहार चली, मधुरिमा चहुँ ओर फैली।
वर्षा की बूँदें छम-छम छलकीं
मानो हृदय की हर धड़कन का स्पन्दन
हुआ मधुर गुरुवर के आने से॥
होली के रंगों से भीगी चुनरिया
सतरंगी इन्द्रधनुषी रंगों में...
मन भीग गया, तन भीग गया,
हृदय पुलकित हुआ, हे गुरुवर ! तुम्हारे आवन से॥
हे प्राणप्रिय गुरुवर ! आपका आगमन ही तो,
हमारी दीपावली, होली, हर पर्व था।
अबकी यह पहली दीपावली,
जब मन कभी हर्षा किया तो कभी पुलका किया,
...और कभी अति अति विरहातुर हुआ॥
हे गुरुवर ! इस दीवाली के पावन अवसर पर,
महका दो इस जीवन को पुनः स्व-सान्निध्य देकर
जैसे श्रीराम के आवन से अयोध्यावासी कृतकृत हुए
दर्शनप्यासे चातक नयनों को निज छबि से कृतार्थ किया॥
इस दीपावली के अवसर पर हृदय-दीप में
जगमग जगमग ज्योति बन स्वयं आये...
निज चरणकमल में मम हृदय-भ्रमर को बंदी किया।
और कोटि-कोटि नमन स्वीकार किया॥

- प्रिया, पंचकूला।

*

अमृत बनाने आ रही हूँ...

मौत ने मुझसे कहा, मैं तुमको लेने आ रही हूँ।
जिन्दगी बोली डरो मत, मैं अभी मुस्करा रही हूँ॥
मैं लिए हिम्मत हृदय में, लक्ष्य-पथ पर बढ़ चला।
कर्म का हथियार लेकर, मुश्किलों से लड़ चला॥
हार ने मुझसे कहा, मैं अश्रु बनकर आ रही हूँ।
जीत यूँ बोली डरो मत, मैं मुस्कान लेकर आ रही हूँ॥
इंसानियत आँसू बहाती, हैवानियत खुशियाँ मनाए।
आदमी से आदमी को, आदमी ही अब लड़ाए॥
कालिमा ने भी कहा, अंधियार बनकर आ रही हूँ।
पूर्णिमा बोली डरो मत, चाँदनी मैं ला रही हूँ॥
मूल्य जाने खो गये कब ? आदमी नंगा हुआ है।
धन बटोरा बेतहाशा, मन से भिखमंगा हुआ है॥
देह ने मुझसे कहा, मैं मिट्टी बनने जा रही हूँ।
आत्मा बोली डरो मत, अमृत बनाने आ रही हूँ॥

सावधानी से चित्त की सुरक्षा

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

गुजरातियों में एक मुहावरा प्रचलित है जिसका अर्थ है :

चाय बिगड़ी उसकी सुबह बिगड़ी।
दाल बिगड़ी उसका दिन बिगड़ा।
अचार बिगड़ा उसका वर्ष बिगड़ा।

लेकिन मैं तो कहता हूँ कि चाहे चाय बिगड़े, चाहे दाल बिगड़े, चाहे अचार बिगड़े तो भी कोई हर्ज नहीं, परंतु अपना हृदय नहीं बिगड़ना चाहिए क्योंकि हृदय में हृदयेश्वर परमात्मा, खुदा खुद होता है। हृदय बिगड़ता है राग-द्वेष से, काम-क्रोध से, भय-चिंता से। कैसे भी करके अपने हृदयकोष की रक्षा करनी चाहिए और हृदयकोष की रक्षा होती है निश्चिंतता से। निश्चिंतता से चित्त शांत रहता है और शांत चित्तवाला व्यक्ति ही प्रसन्न रहता है। जिसे चित्त की प्रसन्नता प्राप्त हो जाती है उसे फिर सुख के लिए कुछ विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ता है। दुःख या मुसीबत आ जाये तब भी वह चिंता करके अपना बोझा नहीं बढ़ाता परंतु चिंतन करके उसका हल निकालता है। जो चिंता की खाई में नहीं गिरता है उसके हृदय में आनंद का झरना फूट निकलता है। वह खुद भी आनंद में रहता है और दूसरों को भी आनंदित करता है।

> *जिसे चित्त की प्रसन्नता प्राप्त हो जाती है उसे फिर सुख के लिए कुछ विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ता। उसके हृदय में आनंद का झरना फूट निकलता है। वह खुद भी आनंद में रहता है और दूसरों को भी आनंदित करता है।*

ऐसा मनुष्य व्यवहार करते हुए भी जल में कमल की तरह निर्लेप रहता है।

भगवान श्रीकृष्ण का जीवन देखो तो... जेल में ही जन्म हुआ। यमुना पार कर रहे थे उसी समय यमुना में बाढ़ आ गयी। कभी पूतना आई तो कभी धेनकासुर आया, कभी बकासुर आया तो कभी अघासुर आया। हजार-हजार विघ्न-बाधाएँ आईं लेकिन श्रीकृष्ण कभी भी सिर पर हाथ रखकर चिंतित होकर नहीं बैठे। इससे हमें भी सीख लेनी चाहिए कि, 'चाहे कैसी भी परिस्थिति आ जाए किंतु चिंतित हुए बिना उसका उपाय खोजेंगे।'

मुस्कुराकर गम का जहर जिनको पीना आ गया।
यह हकीकत है कि जहाँ में उनको जीना आ गया॥

आज से ही आप जीवन जीने का ढंग बदल दो। 'मैं बड़ा हूँ... बाप हूँ और ये छोटे हैं... बेटे हैं' - ऐसी अकड़ में मत रहो। सब जगह बुजुर्ग होकर मत रहो। न्यायाधीश होकर, वकील होकर, डॉक्टर-इंजिनीयर या प्रोफेसर होकर मत रहो। महंत या महामंडलेश्वर होकर मत रहो। छोटे-छोटे बच्चे-बेटे-बेटियों के साथ हँसो, बातचीत करो। सदा मुँह पर साढ़े बारह मत बजाये रखो। विनोद करते समय अपने को भी पूर्णतः बाल्यावस्था में ले जाओ। बालवत् निर्दोष जीवन होने से प्रसन्नता प्राप्त होती है।

हँसते के साथ हँसे दुनियाँ, रोते को कौन बुलाता है ?
जो होना है सो होना है, जो पाना है सो पाना है।
जो खोना है सो खोना है, सब सूत्र प्रभु के हाथों में।
नाहक करनी का बोझ उठाना है।

जो अपने को शरीर मानता है और शरीर से जो कुछ करता है उसे 'मैं करता हूँ' ऐसा मानता है तो उसमें कर्त्तृत्व-भोक्तृत्व का भाव आ ही जाता है और साथ में चित्त में राग-द्वेष भी अनायास आ जाते हैं।

जो अपने को शरीर मानता है और जो शरीर से सुख लेने की बेवकूफी करता है उसको संसार की

चीजों में, परिस्थितियों में राग होता है। जो अपने को आत्मा मानता है, जो आत्मज्ञान पाने में लगता है उसे संसार में राग भी नहीं रहता है और द्वेष भी नहीं रहता है। वह तो संसार का उपयोग करता है, उपभोग नहीं। संसार से सुख लेने की बेवकूफी में नहीं फँसता।

आप संसार में रहते हुए संसार की चीज-वस्तुओं का उपयोग तो करो परंतु 'वे चीजें ऐसी ही बनी रहें' - ऐसा दुराग्रह मत रखो। भोजन करना मना नहीं है लेकिन मजा लेने के लिए ठूँस-ठूँसकर खाओगे तो गड़बड़ हो जाएगी। अच्छे कपड़े पहनने की मना नहीं है लेकिन 'ऐसा हीं रंग-डिजाईन-सिलाई हो' - ऐसा आग्रह रखकर उसीमें समय-शक्ति गँवा देना यह बेवकूफी नहीं तो और क्या है ? बोलना मना नहीं है लेकिन बिनजरूरी बोलकर वाणी का व्यय करने से अपनी ही हानि होती है। देखना बुरा नहीं है लेकिन आँखों द्वारा भी बुराई अंदर घुसती है इसलिए बुरे दृश्य देखने से अपने को बचाएँ। बुद्धिमानी इसीमें है कि खाने-पीने, देखने-सुनने से कुछ आत्मिक या आध्यात्मिक हानि न होती हो इसका ध्यान रखें। यदि रात को सोते वक्त ठाकुरजी को देखते-देखते, गुरुजी की छबि को निहारते हुए, उन्हीं को अपना मानते हुए, स्नेह करते हुए सो जाओ तो तुम्हारे भीतर भी ठाकुरजी का, गुरुजी का स्वभाव प्रकट होता जायेगा लेकिन किसी नट-नटी, एक्टर-एक्ट्रेस का चित्र देखते-देखते या किसी ऐसी ही नॉवेल या गंदी किताब पढ़ते-पढ़ते सो जाओगे तो फिर वही संस्कार चित्त में गहरे उतरेंगे।

आप संसार में रहते हुए संसार की चीज-वस्तुओं का उपयोग तो करो परंतु 'वे चीजें ऐसी ही बनी रहें' - ऐसा दुराग्रह मत रखो।

देखना बुरा नहीं है लेकिन आँखों द्वारा भी बुराई अंदर घुसती है इसलिए बुरे दृश्य देखने से अपने को बचाएँ। बुद्धिमानी इसीमें है कि खाने-पीने, देखने-सुनने से कुछ आत्मिक या आध्यात्मिक हानि न होती हो इसका ध्यान रखें।

रोज सुबह निर्णय करो कि आज अपने चित्त को प्रसन्न रखूँगा। दो आदमी के आँसू पोंछूँगा, उनके दुःख दूर करने का प्रयत्न करूँगा और चार आदमियों को हँसाऊँगा। फिर पता चलेगा कि बिना स्वार्थ के कर्म करने में कितना आनंद आता है!

संसार में रहने की मना नहीं है। संसार में रहो परंतु संयम से रहो। हफ्ते में एक-दो बार 'यौवन सुरक्षा' पुस्तक पढ़ो। संयम और सदाचार से जीवन जियो तो जीवन महक उठेगा एवं जीवन जीने का असली आनंद आयेगा।

रोज सुबह उठो तब पक्का निर्णय करो कि आज अपने चित्त को प्रसन्न रखूँगा। दो आदमी के आँसू पोंछूँगा, उनके दुःख दूर करने का प्रयत्न करूँगा और चार आदमियों को हँसाऊँगा। फिर पता चलेगा कि बिना स्वार्थ के कर्म करने में कितना आनंद आता है! फिर तो तुम्हारा व्यवहार ही साधना बन जाएगा। नियम से प्राणायाम-जप-ध्यान करोगे तो तुम्हारा हृदयकमल खिलने में देर नहीं लगेगी।

साधना किसी मजदूरी का नाम नहीं है। भगवान को पाना कोई मेहनत-मजदूरी का काम नहीं है। साधन-भजन का एकाध अंश लेकर, एकाध कला सीखकर नियम से साधना करोगे तो साधना का सत्य तुम्हारे हृदय में संचारित होने लगेगा। तुम तनावरहित, भयरहित, चिंतारहित होने लगोगे। अपना जीवन माधुर्यमय बना सकोगे और इसी जन्म में जीवनदाता से मुलाकात भी कर सकोगे। बस, केवल थोड़ी सावधानी की जरूरत है।

...और सावधानी यही है कि चिंता, काम-क्रोध, लोभ-मोहरूपी खाई में गिरे बिना संयम, सदाचार, निर्भयता आदि को अपनाकर महापुरुषों के जीवन की नाईं अपने जीवन को

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

महामुनि गोकर्ण

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

तुंगभद्रा नदी के तट पर एक उत्तम नगर बसा हुआ था। वहाँ सभी वर्णों के लोग अपने-अपने धर्मों का पालन करते और सत्य एवं सत्कर्म में लगे रहते थे। उस नगर में आत्मदेव नामक एक ब्राह्मण रहता था जो समस्त वेदों का ज्ञाता, विशेषज्ञ और श्रौत-स्मार्त कर्मों में निष्णात था। उसकी स्त्री का नाम धुन्धुली था। वे दोनों पति-पत्नी बड़े प्रेम से रहते थे। फिर भी उन्हें कोई सन्तान नहीं थी। इस कारण धन, भोग-सामग्री तथा घर आदि कोई भी वस्तु उन्हें सुखद नहीं जान पड़ती थी।

> *'जो भी अपना किया हुआ कर्म है वह अवश्य ही भोगना पड़ेगा। बिना भोगे करोड़ों कल्पों के गुजरने पर भी वह नहीं टलेगा।'*

कुछ काल के पश्चात् उन्होंने सन्तान-प्राप्ति के लिए धर्म का अनुष्ठान आरम्भ किया। उन्होंने धन का आधा भाग धर्म के मार्ग पर खर्च कर दिया तो भी उनके यहाँ न कोई पुत्र हुआ, न पुत्री। इससे ब्राह्मण को बड़ी चिन्ता हुई। वह व्याकुल होकर एक दिन अत्यन्त दुःख के कारण घर छोड़कर वन में चला गया। वहाँ दोपहर के समय उसे प्यास लगी और वह एक तालाब के किनारे जल पीकर बैठ गया।

उसके बैठने के कुछ समयोपरांत एक संन्यासी वहाँ आए। ब्राह्मण ने देखा तो वह उनके पास गया, चरणों में मस्तक झुकाकर प्रणाम किया और कहा :

''मुने ! मेरे यहाँ कोई सन्तान नहीं है, इससे मेरे पितर भी दुःखी हैं। प्रभो ! सन्तानहीन पुरुष का जीवन धिक्कारने योग्य है। अतः मैं यहाँ प्राण त्यागने के लिए आया हूँ।'' यह कहकर वह ब्राह्मण संन्यासी के पास फूट-फूटकर रोने लगा।

संत के हृदय में बड़ी करुणा भर आई। वे योगी भी थे। उन्होंने ब्राह्मण के ललाट में विधाता ने लिखी हुई रेखाओं को पढ़ा और कुछ जानकर विस्तारपूर्वक कहना आरम्भ किया :

''ब्राह्मण ! सुनो। मैंने इस समय तुम्हारा प्रारब्ध देखा है। उससे जान पड़ता है कि सात जन्मों तक तुम्हें किसी प्रकार कोई सन्तान नहीं हो सकती। सन्तान का मोह छोड़ो, क्योंकि यह महान् अज्ञान है। देखो, कर्म की गति बड़ी प्रबल है। अतः विवेक का आश्रय लेकर संसार की वासना को त्याग दो।''

तुलसीदासजी ने ठीक ही कहा है :

पहिले बनी प्रारब्ध, पीछे बना शरीर।
तुलसी यह आश्चर्य है, मन नहीं बाँधत धीर॥

इसलिए विधि के विधान को बड़ा विचित्र जानकर ईश्वरीय विधान को सहर्ष स्वीकार करना चाहिए।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि॥

'जो भी अपना किया हुआ कर्म है वह अवश्य ही भोगना पड़ेगा। बिना भोगे करोड़ों कल्पों के गुजरने पर भी वह नहीं टलेगा।'

इसलिए अपने कर्म को खुशी से भोगना चाहिए।

संन्यासी के वचन सुनकर ब्राह्मण कहने लगा :

''बाबा ! मुझे तो जैसे भी बने पुत्र ही दीजिए, नहीं तो मैं शोक से मूर्छित होकर आपके आगे ही प्राण त्याग दूँगा।''

ब्राह्मण का यह आग्रह देख संन्यासी ने कहा :

''देखो, विधाता के लेख को मिटाने का हठ करने से राजा चित्रकेतु को कष्ट भोगना पड़ा था। अतः दैव के बनाए हुए विधान को समझकर पुत्र-वासना को त्याग दो और प्रभुप्रीति को हृदय में भर दो।''

तपोधन संन्यासी ने एक फल देते हुए कहा : ''इसे तुम अपनी पत्नी को खिला देना। तुम्हारी स्त्री को चाहिए कि वह एक वर्ष तक सत्य, शौच, दया और दान का नियम पालती हुई प्रतिदिन एक समय भोजन करे। इससे उसका बालक अत्यन्त शुद्ध स्वभाववाला होगा।''

संन्यासी के इतना कहने पर भी ब्राह्मण ने उनकी एक न मानी। बड़े आर्तभाव से वह प्रार्थना करने लगा। संतों का स्वभाव तो दयालु होता ही है। वे तो अपने तन-मन से लोगों के कल्याण में ही लगे रहते हैं।

किमत्र चित्रं यत्सन्तः परानुग्रहतत्पराः।
न हि स्वदेहशैत्याय जायन्ते चन्दनद्रुमाः॥

क्या आश्चर्य है ! महात्मा पुरुष सब पर कृपा करने में तत्पर हैं, क्योंकि महात्माओं का शरीर परोपकार के लिए ही होता है। जैसे चंदन के वृक्ष औरों की शांति के लिए ही होते हैं।

इन महापुरुष का हृदय भी उस ब्राह्मण की प्रार्थना से द्रवित हो गया। कृपा करके ब्राह्मण को उन तपोधन संन्यासी ने एक फल देते हुए कहा :

''इसे तुम अपनी पत्नी को खिला देना। तुम्हारी स्त्री को चाहिए कि वह एक वर्ष तक सत्य, शौच, दया और दान का नियम पालती हुई प्रतिदिन एक समय भोजन करे। इससे उसका बालक अत्यन्त शुद्ध स्वभाववाला होगा।''

ऐसा कहकर योगी महात्मा चले गए और ब्राह्मण अपने घर लौटा। यहाँ उसने अपनी पत्नी के हाथ में वह फल दिया और स्वयं कहीं चला गया। उसकी पत्नी तो कुटिल स्वभाव की थी। वह अपनी सखी के आगे रो-रोकर इस प्रकार कहने लगी :

''अहो ! मुझे तो बड़ी भारी चिन्ता हो गई। मैं यह फल नहीं खाऊँगी। सखी ! यह फल खाने से गर्भ रहेगा और खाना-पीना कम हो जाएगा तो मेरी शक्ति घट जायेगी। ऐसी दशा में तुम्हीं बताओ, घर का काम कैसे होगा ? मैंने सुना है कि बच्चा पैदा होते समय भी बड़ी असह्य पीड़ा होती है। मैं सुकुमारी स्त्री, भला उसे कैसे सह सकूँगी ? और तो सब ठीक, पर संन्यासी ने यह सत्य, शौचादि का जो नियम बताया है उसको पालना मेरे लिए बहुत कठिन है।'' ऐसा कुतर्क करके उस ब्राह्मणी ने फल नहीं खाया।

जो सत्य से हीन, पिता-माता की निन्दा करनेवाले, आश्रमधर्म से रहित, कुटिल, शास्त्र विरुद्ध मार्ग पर चलनेवाले हैं और जो संतों की अवज्ञा करते हैं, वे अपने सिर पर पापों की गठरी उठाते हुए इस जीवन-पथ पर बोझिले मन से चलते हैं। वे सचमुच अभागी हैं। धुन्धुली ने भी संत की अवज्ञा की। संत के पावन हाथ का दिया हुआ फल स्वयं न खाकर गौ को खिला दिया। जब उसके पति ने उससे पूछा : ''तुमने फल खाया ?'' तो उसने कह दिया : ''हाँ, खा लिया।''

जो सत्य से हीन, पिता-माता की निन्दा करनेवाले, आश्रमधर्म से रहित, कुटिल, शास्त्र विरुद्ध मार्ग पर चलनेवाले हैं और जो संतों की अवज्ञा करते हैं, वे अपने सिर पर पापों की गठरी उठाते हुए इस जीवन-पथ पर बोझिले मन से चलते हैं। वे सचमुच अभागी हैं।

> *''इस संसार में कुछ भी सार नहीं है। दुःख ही इसका स्वरूप है। यह जीवों को मोह में डालनेवाला है। भला, यहाँ कौन किसका पुत्र है और कौन किसका पिता ? जो इनमें आसक्त होता है उसे ही रात-दिन जलना पड़ता है। सुख तो बस, एकान्तवासी वैराग्यवान मुनि को ही है।''*

एक दिन उसकी बहन उसके घर आयी। धुन्धुली ने उसके आगे अपना सारा वृत्तान्त सुनाकर कहा : ''बहन ! मुझे इस बात की बड़ी चिन्ता है कि सन्तान न होने पर मैं पति को क्या उत्तर दूँगी ? इस दुःख के कारण मैं दुबली होती जा रही हूँ। बताओ मैं क्या करूँ ?''

तब धुन्धुली की बहन ने कहा : ''बहन ! मेरे पेट में बच्चा है। प्रसव होने पर वह बालक मैं तुम्हें दे दूँगी। तब तक तुम गर्भवती होने का नाटक करो। तुम मेरे पति को धन दे देना। इससे वे अपना बालक तुम्हें दे देंगे तथा लोगों में इस बात का प्रचार कर देंगे कि 'मेरी कुप्रसूति हुई है और बच्चा मर गया है।' तुम अपने पति को बताना कि 'पुत्र तो हुआ पर मैं अपने दूध से बच्चे का पोषण करने में सक्षम नहीं हूँ। अतः मेरी बहन इस बच्चे को दूध से पोषित करेगी।' मैं प्रतिदिन तुम्हारे घर आकर बच्चे का पोषण करती रहूँगी।''

तदनंतर समय आने पर धुन्धुली की बहन ने एक बालक को जन्म दिया। बच्चे के पिता ने बालक को लाकर एकान्त में धुन्धुली को दे दिया। आत्मदेव ब्राह्मण को पुत्र हुआ है इसकी सूचना मिलते ही लोगों में बड़ी प्रसन्नता छा गयी। धुन्धुली ने पहले अपनी बहन से तय करने के मुताबिक अपने पति से कहा : ''मैं इस बच्चे को अपना दूध पिलाने में असमर्थ हूँ। गाय-भैंस आदि के दूध द्वारा बच्चे का पोषण न करें। मेरी बहन को भी बच्चा पैदा हुआ है, किन्तु वह मर गया है, अतः अब उसीको अपने घर बुला लें। वही अपने दूध से हमारे अपने बालक का पोषण करेगी।''

उसके पति ने पुत्र की जीवन-रक्षा के लिए सब कुछ करना स्वीकार किया। धुन्धुली ने पुत्र का नाम 'धुन्धुकारी' रखा।

तदनंतर तीन महीने के बाद गौ ने भी एक बालक को जन्म दिया, जो सर्वांग सुन्दर, दिव्य, निर्मल तथा सुवर्ण की-सी कान्तिवाला था। गाँव के सभी लोग आश्चर्यजनक समाचार सुनकर उसे देखने के लिए आए और आपस में कहने लगे : ''देखो, इस समय आत्मदेव का कैसा भाग्य उदय हुआ है ! कितने आश्चर्य की बात है कि गाय के पेट से भी देवता के समान रूपवाला बालक उत्पन्न हुआ !''

उस बालक के कान गौ के कान के समान थे, यह देखकर आत्मदेव ने उसका नाम गोकर्ण रख दिया। परन्तु गाय के कोख से देवता के समान बालक का जन्म कैसे हुआ ? इस गुप्त रहस्य का पता उसे न चला।

कुछ काल व्यतीत होने पर वे दोनों बालक जवान हो गए। उनमें गोकर्ण तो पण्डित और ज्ञानी हुआ किन्तु धुन्धुकारी महा दुष्ट निकला। स्नान, दान, धर्म का तो वह पालन ही नहीं करता था। चोरी करना, जीवों की हिंसा करना, द्वेष करना, दीन-दुःखियों को कष्ट पहुँचाना आदि अवगुण उसमें छाए हुए थे। उसने वेश्या के कुसंग में पड़कर पिता का सारा धन बरबाद कर दिया। इस प्रकार धनहीन हो जाने पर आत्मदेव ब्राह्मण फूट-फूटकर रोने लगा और कहने लगा :

''इस प्रकार पुत्रवान बनने से तो अपुत्र रहना ही अच्छा है। कुपुत्र बड़ा ही दुःखदायी होता है। अब मैं कहाँ रहूँ ? कहाँ जाऊँ ? क्या करूँ ? कौन मेरा दुःख दूर करेगा ? मुझ पर बड़ा भारी कष्ट आ पहुँचा है। इस बेटे ने तो अब मेरे प्राण ले लेने की ठानी है।'' यों कहकर धुन्धुकारी का पिता आत्मदेव ब्राह्मण उसकी चारित्र्यहीनता से बड़ा दुःखित हो रहा था।

धुन्धुकारी दुराचारी, पापात्मा, सदैव पाप करने में ही रत रहता था जबकि गोकर्ण ज्ञानवान, सदाचारी, वैराग्यवान तथा सच्चरित्रवान था। कहते हैं कि सदाचारी और दुराचारी में इतना ही फर्क है :

दुर्जनो दोषमादत्ते दुर्गंधमिव सूकरः।
सज्जनश्च गुणग्राही हंसक्षीरमिवाम्भसा ॥

'दुर्जन तो दोष को ही ग्रहण करता है, जैसे सूकर दुर्गंध को ही ग्रहण करता है। संतजन गुण को ग्रहण करते हैं, जैसे हंस दूध में पानी मिलाने पर भी केवल दूध को ही ग्रहण करता है।' इसीलिए शास्त्रों ने ठीक ही कहा है :

दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्ययालंकृतोऽपिसन् ।
मणिनालंकृतः सर्पः किमसौ न भयंकरः ॥

दुष्ट पुरुष में यदि दैवयोग से विद्या भी आ जाए तब भी उसका संग त्याग देना ही अच्छा है, जैसे मणिवाला सर्प दंश मार ही देता है। अतः दुर्जनों का संग त्यागकर सत्संगति करना ही बुद्धिमानी है।

धुन्धुकारी ने अपनी माता को खूब पीटा और जलती हुई लकड़ी लेकर उसके पीछे पड़ा। धुन्धुली उसकी क्रूरता से दुःखी होकर रात को कुँए में कूद पड़ी तथा इससे उसकी मृत्यु हो गई।

दुराचारी धुन्धुकारी के स्वभाव से दुःखी होकर उसके पिता आत्मदेव ब्राह्मण प्राण त्यागने के लिए उद्यत हुए। इसी समय ज्ञानवान गोकर्णजी वहाँ आये और वैराग्य का महत्त्व दिखलाते हुए अपने पिता को समझाने लगे :

''इस संसार में कुछ भी सार नहीं है। दुःख ही इसका स्वरूप है। यह जीवों को मोह में डालनेवाला है। भला, यहाँ कौन किसका पुत्र है और कौन किसका पिता ? जो इनमें आसक्त होता है उसे ही रात-दिन जलना पड़ता है। इन्द्र अथवा चक्रवर्ती राजाओं को भी कोई सुख नहीं है। सुख तो बस, एकान्तवासी वैराग्यवान मुनि को ही है। सन्तान के प्रति यह जो ममता है उसे छोड़िये। सन्तान की तो बात ही क्या, आपका यह प्रिय शरीर भी एक-न-एक दिन आपको छोड़ना पड़ेगा। सब मालमिल्कियत, सगे-सम्बन्धियों को भी एक दिन छोड़ना ही पड़ेगा। इसलिए आप अभी से इन सबका मोह छोड़कर वन में चले जाइए।''

स्त्रियों ने उसे रस्सियों से कसकर बाँध दिया और जलते हुए अंगारे लाकर उसके मुँह पर डाल दिये। इससे वह आग की लपटों से पीड़ित होकर छटपटाता हुआ मर गया। फिर उन्होंने उसकी लाश को एक गड्ढे में डाल दिया।

गोकर्ण की यह बात सुनकर आत्मदेव वन में जाने के लिए उद्यत हुए और बोले : ''तात ! मुझे वन में रहकर क्या करना चाहिए ? यह विस्तारपूर्वक बताओ।''

गोकर्ण : ''हड्डी, मांस और रक्त के पिण्डरूप इस शरीर में आप 'मैं' पने का अभिमान छोड़ दीजिए और स्त्री-पुत्र आदि में भी 'ये मेरे हैं' इस भाव को सदा के लिए त्याग दीजिए। सदा भगवद्भजनरूप दिव्य धर्म का आश्रय लीजिए। साधु-संतों की सेवा कीजिये, भोगों की तृष्णा को त्याग दीजिए तथा निरन्तर भगवत्सेवा एवं भगवत्कथा के रस का पान कीजिए।''

इस प्रकार पुत्र गोकर्ण के कहने से आत्मदेव साठ वर्ष की अवस्था बीत जाने पर घर छोड़कर स्थिर चित्त से वन को चले गए और वहाँ प्रतिदिन भगवान श्रीहरि की परिचर्या करते हुए उन्हें प्रसन्न करने का यत्न करते रहे।

पिता के विरक्त होकर वन में चले जाने के बाद एक दिन धुन्धुकारी ने अपनी माता को खूब पीटा और कहा : ''बता, धन कहाँ रखा है ? नहीं तो लातों से तेरी खबर लूँगा।'' इस प्रकार कहकर वह जलती हुई लकड़ी लेकर उसके पीछे पड़ा। धुन्धुली उसकी क्रूरता से दुःखी होकर रात को कुँए में कूद पड़ी तथा इससे उसकी मृत्यु हो गई।

माता-पिता के न रहने पर गोकर्णजी तीर्थयात्रा के लिए चल दिए। वे योगनिष्ठ थे। उनके मन में इस घटना का न शोक था और न कोई सुख क्योंकि ज्ञानी का न कोई शत्रु होता है न मित्र। वे समचित्त होते हैं।

अंजलिस्थानि पुष्पाणि वासयन्ति करद्वयम् ।
अहो सुमनसां वृत्तिर्वामदक्षिणयोः समा ॥

जैसे फूल दाहिने हाथ तथा बाँए हाथ में एक-सा ही सुगन्ध देता है वैसे ही महापुरुष भी शत्रु-मित्र भाव

से रहित सबसे एक भाव से ही वर्तते हैं।

शांतचित्त, समभावी गोकर्णजी को न कोई हर्ष था न कोई शोक। अब गोकर्णजी के तीर्थयात्रा पर निकल जाने पर धुन्धुकारी और ज्यादा स्वतंत्र हो गया। वह पाँच वेश्याओं के साथ घर में रहने लगा। उनके पालन-पोषण के लिए बहुत सारी सामग्री जुटाने की चिन्ता से उसकी बुद्धि मोहित हो गई थी। अतः वह अत्यंत क्रूरतापूर्ण कर्म करने लगा। एक दिन उन कुलटाओं ने उससे गहनों के लिए इच्छा प्रकट की। धुन्धुकारी तो काम से अन्धा हो गया था।

अपने भाई गोकर्ण को वहाँ सोया देख, धुन्धुकारी ने आधी रात के समय उन्हें अपना महा भयंकर रूप दिखाया। वह कभी भेड़, कभी हाथी, कभी भैंसा, कभी अग्नि, कभी कोई बीभत्स रूप धारण करता था।

धन का नाश होना, मृत्यु हो जाना, कुल का विनाश, घर में कलह और भारी से भारी दुःख- ये सब काम से ही पैदा होते हैं।

अंगं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहीनं जातं तुण्डम्।
वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तदपि न मुञ्चत्याशा पिण्डम्॥

'अंग गलित हो गए, सिर के बाल पक गए, मुख में दाँत नहीं रहे, बूढ़ा हो गया, लाठी लेकर चलने लगा, फिर भी आशा पिण्ड नहीं छोड़ती।'

इसलिए कहते हैं कि काम को जीतना बड़ा कठिन है। फिर भी कामुक व्यक्ति भी अगर सत्संगति करे तो अपना जीवन धन्य बना लेता है। वह काम को राम में बदल सकता है।

धुन्धुकारी को काम ने अन्धा बना दिया इसलिए उसे अपनी मृत्यु की भी याद नहीं रही। वह गहने जुटाने के लिए घर से निकल पड़ा और जहाँ-तहाँ से बहुत-सा धन चुराकर पुनः घर लौट आया। वहाँ आकर उसने उन वेश्याओं को बहुत-से सुन्दर सुन्दर वस्त्र और कितने ही आभूषण दिये। अधिक धन का संग्रह देखकर रात्रि में उन वेश्याओं ने विचार किया कि 'यह प्रतिदिन कहीं न कहीं से धन चुराकर लाया करता है, अतः राजा इसे अवश्य पकड़ेंगे। फिर सारा धन छीनकर इसे मृत्युदण्ड भी देंगे। ऐसी दशा में इस धन की रक्षा के लिए हम लोग ही क्यों न इसे गुप्तरूप से मार डालें ? इसे मारकर सारा धन लेकर हम किसी और जगह पर चले जाएँगे।'

ऐसा निश्चय करके उन स्त्रियों ने उसे रस्सियों से कसकर बाँध दिया। गले में फाँसी डालकर उसके प्राण लेने की चेष्टा करने लगीं किन्तु वह तुरन्त न मरा। अतः उनको बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने जलते हुए अंगारे लाकर उसके मुँह पर डाल दिये। इससे वह आग की लपटों से पीड़ित होकर छटपटाता हुआ मर गया। फिर उन्होंने उसकी लाश को एक गड्ढे में डाल दिया। कहा है :

नृपस्य चित्तं कृपणस्य वित्तं मनोरथाः दुर्जनमानवानाम्।
त्रियाः चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो न जानाति कुतः मनुष्याः॥

'लोभी के धन को, राजा के मन को, दुर्जन के मनोरथ, स्त्रियों के चरित्र और पुरुष के भाग्य को देवता भी नहीं जान सकते, फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या ?'

उन स्त्रियों ने भी अपने पति को मारकर, गड्ढा खोदकर उसकी लाश को गाड़ दिया और इस रहस्य का उन्होंने किसीको भी पता न चलने दिया। लोगों के पूछने पर उन स्त्रियों ने कह दिया : ''हमारे प्रियतम धन के लोभ से कहीं दूर चले गए हैं। इस वर्ष के भीतर ही लौट आएँगे।''

निदान, वे कुलटाएँ धुन्धुकारी का सारा धन लेकर चम्पत हो गयीं और धुन्धुकारी अपने कुकर्म के कारण प्रेत हुआ। वह बवंडर का रूप धारण करके सदा दसों दिशाओं में दौड़ता फिरता था और शीत-घाम का क्लेश सहता तथा भूख-प्यास से पीड़ित और व्याकुल होता हुआ 'हा दैव ! हा दैव !' की बारंबार पुकार लगाता, किन्तु कहीं भी उसे शरण नहीं मिलती।

तीर्थों में भ्रमण करते हुए गोकर्णजी को धुन्धुकारी के मरने का समाचार मालूम हुआ। तत्पश्चात् गोकर्णजी एक दिन अपने गाँव में आए और रात्रि के समय अपने घर के आँगन में सो गए। अपने भाई गोकर्ण को वहाँ सोया देख, धुन्धुकारी ने आधी रात के समय

उन्हें अपना महा भयंकर रूप दिखाया। वह कभी भेड़, कभी हाथी, कभी भैंसा, कभी अग्नि, कभी कोई बीभत्स रूप धारण करता था। गोकर्णजी बड़े धैर्यवान महात्मा थे। उन्होंने उसकी विपरीत अवस्थाएँ देखकर जान लिया कि यह कोई दुर्गति में पड़ा हुआ जीव है। तब उन्होंने पूछा :

''अरे भाई ! तू कौन है ? रात्रि के समय अत्यंत भयानक रूप में क्यों प्रकट हुआ है ? तेरी ऐसी दशा क्यों हुई है ? हमें बता तो सही, तू प्रेत या पिशाच है अथवा कोई राक्षस है ?''

उनके ऐसा पूछने पर वह बारंबार उच्च स्वर में रुदन करने लगा। उसमें बोलने की शक्ति नहीं थी, इसलिए उसने केवल संकेत मात्र किया। तब गोकर्णजी ने अंजलि में जल लेकर उसे मंत्र से अभिमंत्रित करके धुन्धुकारी के ऊपर छिड़क दिया। उस जल के छिड़के जाने पर उसका पाप-ताप कुछ कम हुआ। तब वह कहने लगा :

''भैया ! मैं तुम्हारा भाई धुन्धुकारी हूँ। मैंने अपने ही दोष से अपने ब्राह्मणत्व का नाश किया है। मैं महान् अज्ञान में चक्कर लगा रहा था, अतः मेरे पापकर्मों की कोई गिनती नहीं है। मैंने बहुत लोगों की हिंसा की थी इसलिए मैं भी स्त्रियों द्वारा तड़पा-तड़पाकर मारा गया। मेरे भाई ! तुम दया के सागर हो। अब किसी प्रकार जल्दी ही मेरा उद्धार करो।''

धुन्धुकारी की बात सुनकर गोकर्णजी बोले : ''भाई ! यह तो बड़े आश्चर्य की बात है ! मैंने तो तुम्हारे लिए गयाजी में विधिपूर्वक पिण्डदान किया है फिर तुम्हारी मुक्ति कैसे नहीं हुई ?''

प्रेत : ''भाई ! सैकड़ों गया-श्राद्ध करने से भी मेरी मुक्ति नहीं होगी। इसके लिए अब तुम और ही कोई उपाय सोचो।''

प्रेत की यह बात सुनकर गोकर्ण बोले : ''यदि सैकड़ों गया-श्राद्ध से तुम्हारी मुक्ति नहीं होगी तब तो तुम्हें इस प्रेत योनि से छुड़ाना असम्भव ही है। फिर भी तुम्हारी मुक्ति के लिए कोई दूसरा उपाय सोचकर उसीको काम में लाऊँगा।''

गोकर्णजी को बहुत सोच-विचार करने के बाद भी धुन्धुकारी के उद्धार का कोई उपाय नहीं दिखाई दिया। तब गोकर्णजी ने भगवान सूर्य की ओर देखकर कहा : ''भगवन् ! आप सारे जगत के साक्षी हैं। आपको नमस्कार है। आप मुझे धुन्धुकारी की मुक्ति का साधन बताइए।''

सूर्यदेव ने दूर से ही स्पष्टवाणी में कहा : ''श्रीमद् भागवत से अवश्य मुक्ति हो सकती है।''

तत्पश्चात् गोकर्णजी व्यासगद्दी पर बैठकर कथा बाँचने लगे। उस समय वह प्रेत भी वहाँ आया और इधर-उधर बैठने के लिए स्थान ढूँढने लगा। इतने में ही उसकी दृष्टि एक सात गाँठवाले ऊँचे बाँस पर पड़ी। उसीमें घुसकर वह कथा सुनने के लिए बैठ गया।

गोकर्णजी ने एक वैष्णव ब्राह्मण को प्रधान श्रोता बनाकर पहले स्कन्ध से ही स्पष्ट वाणी में कथा सुनाना आरम्भ किया। सायंकाल में जब कथा बन्द होने लगी तब एक विचित्र घटना घटित हुई। सब श्रोताओं के देखते-देखते तड़-तड़ शब्द करती हुई बाँस की एक गाँठ फट गई। दूसरे दिन शाम को दूसरी गाँठ और तीसरे दिन तीसरी गाँठ फट गई। इस प्रकार सात दिनों में उस बाँस की सातों गाँठों को फाड़कर धुन्धुकारी ने बारह स्कन्धों के श्रवण से निष्पाप हो

''भाई ! तुमने कृपा करके मुझे प्रेत योनि की यातनाओं से मुक्त कर दिया। यह प्रेतपीड़ा का नाश करनेवाली श्रीमद् भागवत की कथा धन्य है तथा भगवान श्रीकृष्ण के धाम की प्राप्ति करानेवाला इसका सप्ताह-पारायण भी धन्य है !''

'यह कथा बड़ी ही पवित्र है। एक बार के श्रवण से ही समस्त पापराशि को भस्म कर देती है। श्राद्ध के समय यदि इसका पाठ किया जाए तो इससे पितृगण को बड़ी तृप्ति होती है और नित्य पाठ करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।'

श्रीराम-वशिष्ठ संवाद

मोक्ष के चार द्वारपाल

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

शास्त्रों में कहा गया है कि ज्ञानयोग का साधक साधन-चतुष्ट्य से संपन्न होना चाहिए। वे चार साधन हैं : विवेक, वैराग्य, षट्संपत्ति, मुमुक्षुत्व ।

षट्संपत्ति : साधक के पास छः प्रकार की संपत्ति होनी चाहिए : शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान।

इसके अलावा श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण के मुमुक्षु प्रकरण में मोक्ष की इच्छा रखनेवाले साधक के लिए मुक्ति के द्वार तक ले जानेवाले चार साधन का वर्णन आता है। वे हैं शम, संतोष, सत्संग और विचार। ये मोक्ष के चार द्वारपाल कहे गये हैं।

शम : मोक्ष का एक द्वारपाल है शम। शम माने मन को रोकना। जिनके पास शम है उसे शांति अनायास मिलती है। मन को गलत जगह जाते समय जरा देखना, उस पर अपने हस्ताक्षर नहीं करना। उसे रोककर अपने-आपमें वापस लाना है। इस तरह मन को रोकने से वासनाएँ क्षीण होती हैं। ज्यों-ज्यों इच्छा-वासनाएँ क्षीण होंगी, त्यों-त्यों मन शांत होता जाएगा। मन की शांति और हृदय की प्रसन्नता प्राप्त होने से इन्द्रियाँ भी शांत होती हैं। जिसको शांति की प्राप्ति होती है उसका मन जगत के आकर्षणों से या जगत के भले-बुरे व्यवहार से चलायमान नहीं होता है।

मन की शांति से जितना सुख मिलता है, उतना और किसीसे नहीं मिलता। जिसको मन की शांति प्राप्त होती है, वह जगत में सूर्य की तरह प्रकाशता है। जितना-जितना मन शांत होता जाता है उतना-उतना परम पद में स्थित होता जाता है और शीघ्र ही मोक्ष की प्राप्ति कर लेता है। मन की शांति को पाये हुए महापुरुष शांत चित्त से, सहज भाव से जगत के व्यवहार करते हैं।

संतोष : जो अप्राप्त वस्तु की इच्छा नहीं करता है और न्याय के मार्ग से मिली हुई वस्तु का उपभोग करता है वह पुरुष संतोषी कहा जाता है। संतोष ही परम धन है। संतोषरूपी धन से शीघ्र कल्याण होता है और शांति की प्राप्ति होती है। संतोषी पुरुष को भोग-वासना बढ़ानेवाले साधन-वैभव की परवाह नहीं होती। वह संतुष्ट नर बाह्य दृष्टि से गरीब हो, फिर भी वह विश्व का सम्राट है। जो कुछ अनायास मिलता है उसीमें वह संतुष्ट रहता है। उसे चिंता, लोभ, तृष्णा नहीं सताती क्योंकि उसके पास इन महारोगों की संतोषरूपी उत्तम औषधि है। ऐसे संतोषी पुरुष के दर्शनमात्र से आनंद की प्राप्ति होती है।

ज्यों-ज्यों इच्छा-वासनाएँ क्षीण होंगी, त्यों-त्यों मन शांत होता जाएगा। मन की शांति और हृदय की प्रसन्नता प्राप्त होने से इन्द्रियाँ भी शांत होती हैं। जिसको शांति की प्राप्ति होती है उसका मन जगत के आकर्षणों से या जगत के भले-बुरे व्यवहार से चलायमान नहीं होता है।

सत्संग : सत्संग से मनुष्य का परम कल्याण होता है। सत्संग जीते-जी मुक्ति का अनुभव करा सकता है। सत्संग में महापुरुषों के जीवन की कुछ अनुभूत युक्तियाँ मिल जाती हैं जिनसे आदमी सदाचार के नियमों का पालन करके उन्नत

होता जाता है और सत्यस्वरूप आत्मा का ज्ञान भी पा लेता है। सत्संग से विवेकबुद्धिरूपी सूर्य का उदय होता है जिससे अंतर का अज्ञानांधकार दूर होता है। मन को वश करके माया का आवरण दूर करने में सत्संग उत्तम उपाय है। सत्संग और संतपुरुषों का समागम एक ऐसी मजबूत नौका के समान है जो जीव को संसार-सागर से पार करके शिवत्व में पहुँचा देता है।

संतोषरूपी धन से शीघ्र कल्याण होता है और शांति की प्राप्ति होती है। चिंता, लोभ, तृष्णा नहीं सताती क्योंकि इन महारोगों की संतोषरूपी उत्तम औषधि है। संतोषी पुरुष के दर्शनमात्र से आनंद की प्राप्ति होती है।

विचार : आत्मविचार से सत्य-ज्ञान का दर्शन होता है। बार-बार विचार करें कि 'मैं कौन हूँ ? जगत् क्या है ? ईश्वर क्या है ?' - इस प्रकार के विचार करने से अज्ञान का नाश होकर ब्रह्मज्ञान का उदय होता है और जीव मुक्ति प्राप्त करता है। आत्मविचार से ही साधक अज्ञानरूपी बादलों को हटाकर ज्ञानसूर्य का प्रकाश पा सकता है। जन्म-मरण के चक्र से छुड़ानेवाला मित्र विचार है। आत्मविचार से अन्य विचारों को, वासनाओं को, कल्पनाओं को दूर करो और दिव्य आनंद और शाश्वत शांति को प्राप्त करो। आत्मविचार बड़े-बड़े संकटों में, भय में, आपत्तिकाल में सहायक सिद्ध होता है। अतः सदैव उनका सेवन करो और आत्मानंद की प्राप्ति करो।

सत्संग और संतपुरुषों का समागम एक ऐसी मजबूत नौका के समान है जो जीव को संसार-सागर से पार करके शिवत्व में पहुँचा देता है।

मोक्ष के इन चार द्वारपालों के साथ मैत्री करोगे तो वे मोक्षमंदिर के द्वार खोल देंगे और तुम्हें आत्मराज्य के भीतर प्रवेश दिलायेंगे। जो पुरुष सतत अभ्यास से शास्त्र, गुरु और स्वानुभव की एकतानता करता है वह आत्मसाक्षात्कार कर लेता है।

जब तक मन में आत्मविचार, ब्रह्मविचार का उदय न हो तब तक मनुष्य को आत्मज्ञान से युक्त ग्रंथों का भलीभाँति अभ्यास करना चाहिए, गुरुमंत्र का जप, ध्यान और साधु पुरुषों का संग करना चाहिए। चार साधनों की मैत्री या सदाचारों के नियमों का पालन करना चाहिए। तैलधारावत् आत्मचिंतन, आत्मअभ्यास करके नित्य, अविनाशी, स्वयंप्रकाश आत्मा का ज्ञान पा लेना चाहिए। इससे सदा के लिए सब दुःखों का अंत हो जाता है और ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी जिस आनंद में निमग्न रहते हैं, वह परमानंद प्राप्त हो जाता है।

*

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी तरह की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें। (२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

संसार-ताप से तप्त जीवों में शांति का संचार करनेवाले, अनादिकाल से अज्ञान के गहन अंधकार में भटकते हुए जीवों को ज्ञान का प्रकाश देकर सही दिशा बतानेवाले, परमात्म-प्राप्तिरूपी मंजिल को तय करने के लिए समय-समय पर योग्य मार्गदर्शन देते हुए परम लक्ष्य तक ले जानेवाले सर्वहितचिंतक, ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों की महिमा अवर्णनीय है।

वे महापुरुष केवल दिशा ही नहीं बताते वरन् चलने के लिए पगडंडी भी बना देते हैं, चलना भी सिखाते हैं, उंगली भी पकड़ाते हैं और हम उनकी उंगली अगर छोड़ भी दें तो करुणा-कृपा की वृष्टि करते हुए वे हमें ऊपर भी उठा लेते हैं। जैसे माता-पिता अपने बालक को कन्धे पर उठाकर यात्रा पूरी करवाते हैं वैसे ही वे कृपालु महापुरुष हमारी आध्यात्मिक यात्रा को पूर्ण कर देते हैं। माता-पिता की तरह कदम-कदम पर हमारी संभाल रखनेवाले, सर्वहितचिंतक, समता के सिंहासन पर बैठानेवाले ऐसे विरल संतों को लाख-लाख वंदन...

ऐसे महापुरुषों की कृपा से जीव रजो-तमोगुण के प्रभाव से छूटकर ऊर्ध्वगामी होता है, जिज्ञासुओं की ज्ञान-पिपासा तृप्त होने लगती है, जपियों का जप सिद्ध होने लगता है, तपियों का तप फलने लगता है, योगियों का योग सफल होने लगता है। ऐसे महापुरुषों के प्रभाव से समग्र वातावरण में पवित्रता, उत्साह, सात्त्विकता एवं आनंद की लहर छा जाती है। इतना ही नहीं, वरन् उनकी सत्संगरूपी शीतल गंगा में अवगाहन करके जीव के त्रितापों का शमन हो जाता है एवं वह जन्म-मरण की शृंखला से छूट जाता है।

अपने स्वरूप में जगे हुए ऐसे महापुरुषों की करुणामयी शीतल छाया में संसार के दुःखों से ग्रस्त जीवों को परम शांति मिलती है। उनके प्रेम से परिपूर्ण नेत्रों से अविरत अमीमय वृष्टि होती रहती है। उनकी अमृतमयी वाणी जीवों के हृदय में आनंद एवं माधुर्य का संचार करती है। उनके पावन करकमल सदैव शुभ संकल्पों के आशीर्वाद देते हुए अनेकों पतितों को पावन कर देते हैं। उनकी चरणरज से भूमि तीर्थत्व को प्राप्त कर लेती है। उनकी कृपादृष्टि में आनेवाले जड़ पदार्थ भी जब कालांतर में जीवत्व को मिटाकर ब्रह्मत्व को प्राप्त कर लेते हैं तो मनुष्य की तो बात ही क्या ? किंतु ऐसे महापुरुष हजारों में तो कहाँ, लाखों-करोड़ों में भी विरले ही होते हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता में कहा भी है :

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

'बहुत जन्मों के अंत के जन्म में तत्त्वज्ञान को प्राप्त हुआ ज्ञानी सब कुछ वासुदेव ही है, इस प्रकार मेरेको भजता है। वह महात्मा अति दुर्लभ है।' (गीता : ७.१९)

ऐसे ब्रह्माकार वृत्ति में स्थित हुए महात्माओं के दर्शन की महिमा का वर्णन करते हुए संत कबीर ने कहा है :

अलख पुरुष की आरसी साधु का ही देह।
लखा जो चाहे अलख को इन्हीं में तू लख ले॥

'परमात्मा के साथ एकरूप हो गये ब्रह्म-साक्षात्कारी महापुरुष की देह एक दर्पण के समान है, जिसमें आप अलख पुरुष (परमात्मा) के दर्शन कर सकते हो।'

गुरु नानकजी ने भी संतों की महिमा का वर्णन करते हुए कहा है :

संत की महिमा वेद न जाने।
जेता जाने तेता बखाने॥

संसार का सच्चा कल्याण संतों द्वारा ही हो सकता है। ऐसे महापुरुषों का पूरा जीवन ही **'बहुजनहिताय**

थी। उनके दर्शनमात्र से प्रसन्नता उत्पन्न हो जाती थी, निराशा के बादल छँट जाते थे, हताश हुए लोगों में उत्साह का संचार हो जाता था एवं उलझे हुओं की उलझनें दूर होकर उनमें नयी चेतना छा जाती थी। उनका सम्पूर्ण जीवन ही मानो निष्काम कर्मयोग का मूर्तिमंत स्वरूप था।

लोगों के जीवन में से लुप्त होते धार्मिक संस्कारों को पुनः जगाने के लिए, संस्कृति के पुनरुत्थान के लिए एवं सोयी हुई आध्यात्मिकता में पुनः प्राण फूँकने के लिए वे आजीवन कार्यरत रहे। उनकी प्रार्थना ही विश्वकल्याण की भावना की द्योतक है :

'हे भगवान् ! सबको सद्बुद्धि दो... शक्ति दो... आरोग्यता दो... हम सब अपना-अपना कर्त्तव्य पालें एवं सुखी रहें...'

लाखों-लाखों माँ सरस्वतीजी भी एकत्रित होकर जिनकी महिमा का वर्णन हीं कर सकतीं ऐसे ब्रह्मनिष्ठ, आत्म-साक्षात्कारी महापुरुष, वेदांत के मूर्तिमंतरूप श्री लीलाशाहजी महाराज के संदर्भ में कुछ भी लिखना मात्र बालचेष्टा ही है। उनकी दिव्य लीला वर्णनातीत है, शब्दातीत है। उनके अलौकिक व्यक्तित्व को शब्दसीमा में बाँधना असंभव है। वामन भला विराट को कैसे नाप सकता है ? गागर में पूरा सागर कैसे समा सकता है ?

विशाल महासागर में से मात्र एक बूँद की झलक दिखाने के सिवा और क्या हो सकता है ? उनका चरित्र इतना विशाल, गहन एवं उदार है कि उनके विषय में कुछ भी कहना या लिखना उनकी विशालता को मर्यादित कर देने जैसा लगता है।

फिर भी... अंतर में केवल श्रद्धा रखकर ही गुह्य ब्रह्मविद्या के मूर्तिमंत स्वरूप पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज के जीवन के प्रेरक प्रसंगों एवं जिज्ञासुओं के जीवन में ज्ञान का प्रकाश फैलानेवाली सत्संग-कणिकाओं को यहाँ यथाशक्ति प्रस्तुत करने का एक विनम्र प्रयास किया जा रहा है।

जन्म एवं बाल्यकाल

हमारी वैदिक हिन्दू संस्कृति का विकास सिंधु नदी के तट से ही प्रारंभ हुआ है। अनेकों ऋषि-मुनियों ने उसके तट पर तपस्यारत होकर आध्यात्मिकता के शिखरों को सर किया है एवं पूरे विश्व को अपने ज्ञान-प्रकाश से प्रकाशित किया है।

उसी पुण्यसलिला सिंधु नदी के तट पर स्थित सिंध प्रदेश के हैदराबाद जिले के महराब चांडाई नामक गाँव में ब्रह्मक्षत्रिय कुल में परहितचिंतक, धर्मप्रिय एवं पुण्यात्मा टोपणदास गंगाराम का जन्म हुआ था। वे गाँव के सरपंच थे। सरपंच होने के बावजूद उनमें जरा-सा भी अभिमान नहीं था। वे स्वभाव से खूब सरल एवं धार्मिक थे। गाँव के सरपंच होने के नाते वे गाँव के लोगों के हित का हमेशा ध्यान रखते थे। भूल से भी लाँच-रिश्वत का एवं हराम का पैसा घर में न आ जाये इस बात का वे खूब ख्याल रखते थे एवं भूल से भी अपने सरपंच पद का दुरुपयोग नहीं करते थे। गाँव के लोगों के कल्याण के लिए ही वे अपनी समय-शक्ति का उपयोग करते थे। अपनी सत्यनिष्ठा एवं दयालुता तथा प्रेमपूर्ण स्वभाव से उन्होंने लोगों के दिल जीत लिए थे। साधु-संतों के लिए तो पहले से ही उनके हृदय में सम्मान था। इन्हीं सब बातों के फलस्वरूप आगे चलकर उनके घर में दिव्यात्मा का अवतरण हुआ।

वैसे तो उनका कुटुंब सभी प्रकार से सुखी था, दो पुत्रियाँ भी थीं, किन्तु एक पुत्र की कमी उन्हें सदैव खटकती रहती थी। उनके भाई के यहाँ भी एक भी पुत्र-संतान नहीं थी।

एक बार पुत्रेच्छा से प्रेरित होकर टोपणदास अपने कुलगुरु श्री रतन भगत के दर्शन के लिए पास के गाँव तलहार में गये। उन्होंने खूब विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर एवं मस्तक नवाकर कुलगुरु को अपनी पुत्रेच्छा बतायी। साधु-संतों के पास सच्चे दिल से प्रार्थना करनेवाले को उनके अंतर के आशीर्वाद मिल ही जाते हैं। कुलगुरु ने प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हुए कहा :

''तुम्हें १२ महीने के भीतर पुत्र होगा जो केवल तुम्हारे कुल का ही नहीं परंतु पूरे ब्रह्मक्षत्रिय समाज का नाम रोशन करेगा। जब बालक समझनेयोग्य हो जाये तब मुझे सौंप देना।''

संत के आशीर्वाद फले। रंग-बिरंगे फूलों का सौरभ

(शेष पृष्ठ ३० पर)

एक-दूसरे से मोह हो गया। फिर तो साथ-साथ जीने-मरने का इकरार हुआ एवं एक दिन दोनों एक साथ सूरत छोड़कर भाग निकले।

उस दिन घर पर माँ हीरालक्ष्मी ने माधव की खूब राह देखी, किन्तु माधव आया ही नहीं। माँ को रह-रहकर ज्योतिषी की भविष्यवाणी याद आती। उसे हुआ कि जरूर माधव किसी साधु का संग पाकर संसार छोड़कर गया है। उसे तो स्वप्न में भी यह विचार नहीं आया कि उसका माधव एक सुंदर, रूपवान युवती के मोहपाश में सब भूल गया है।

"बेटा! यह मानव-जीवन बहुत ही मूल्यवान है। इसे इस प्रकार हाड़-माँस की देह के मोह में नहीं नष्ट किया जाता।"

माधव एवं सजनी लोगों से डरते-डरते एक गाँव से दूसरे गाँव भटकते रहे। एक रात्रि को दोनों किसी धर्मशाला में रुके तब सजनी को साँप ने काटा और वह मर गयी। सजनी के बिना माधव पागल-सा हो गया एवं 'सजनी... सजनी...' पुकारता हुआ अर्ध विक्षिप्त दशा में भटकने लगा।

थोड़े समय के बाद जब दुःख की मात्रा कुछ कम हुई, तब उसे माँ की याद आयी और आश्वासन पाने के लिए वह माँ के पास सूरत आया।

माँ तो माधव को पागल अवस्था में देखकर आश्चर्यचकित हो उठी। माधव ने सारी हकीकत बता दी। माँ समझदार थी। माँ ने आश्वासन देते हुए कहा :

''बेटा ! यह मानव-जीवन बहुत ही मूल्यवान है। उसे इस प्रकार हाड़-माँस की देह के मोह में नहीं नष्ट किया जाता।''

इस प्रकार माँ ने प्रेमपूर्वक उसे डाँटा, तब वह बहुत रोया एवं पश्चात्ताप करने लगा और बोला :

''माँ ! अब मैं क्या करूँ ?''

माँ को ज्योतिषी के शब्द याद आ गये। राजपूतानी हीरालक्ष्मी का क्षत्रियत्व जाग उठा :

''बेटा ! किसी सद्गुरु को खोजकर उनके चरणों में आत्म-समर्पण कर दे। याद रखना, एक बार इस माँ का दूध पिया है, उसे लज्जित मत करना और अब किसी दूसरी माँ का दूध न पीना पड़े - ऐसा पुरुषार्थ करना। तुझे मेरे आशीर्वाद हैं।''

माधव ने माँ के चरणस्पर्श किये और निकल पड़ा तापी के तट पर। सद्गुरु की खोज करते-करते 'कल्याण कुटीर' पहुँचा। वहाँ एक तेजस्वी महात्मा पद्मासन लगाकर बैठे थे। उनके दर्शन करते ही माधव के कदम वहीं रुक गये। जब महात्मा ध्यान में से उठकर बाहर आये तब उसने महात्मा के चरण पकड़ते हुए कहा :

''भगवन् ! इस बालक को आपके चरणों में शरण दीजिए।''

''तेरे पत्नी-बच्चों का क्या होगा ?''

''भगवन् ! पत्नी तो नहीं किन्तु प्रेयसी थी। घर पर अभी माँ अकेली ही हैं। उनके आशीर्वाद लेकर ही आया हूँ।''

''युवक की जिज्ञासा देखकर महात्मा ने सहमति दे दी।

माधव ने तन-मन से बहुत वर्षों तक गुरुजी की खूब सेवा की। माधव की गुरुनिष्ठा को देखकर गुरु भी प्रसन्न थे। किन्तु दूसरे शिष्यों को माधव के प्रति ईर्ष्या होने लगी।

"मुझे एक मानव-शीश की बलि चढ़ानी है। बोलो, तुममें से कौन तैयार है सिर देने के लिए ?"

गुरु तो अंतर्यामी थे। शिष्यों के मन के भावों को ताड़ गये। एक दिन उन्होंने सभी शिष्यों को बुलाकर कहा :

''मुझे एक मानव-शीश की बलि चढ़ानी है। बोलो, तुममें से कौन तैयार है सिर देने के लिए ?''

गुरुजी के इन वचनों से सभी शिष्य विचार में पड़ गये। सभी एक-दूसरे के मुँह की ओर ताकने लगे। माधव एकदम पीछे बैठा था। इतने में तो गुरुजी ने पुनः कहा :

''क्या कोई भी तैयार नहीं है ?''

माधव ने जैसे ही प्रश्न सुना कि वह तुरंत उठ

श्रीमद् आद्य शंकराचार्यविरचितम्

।। गुर्वष्टकम् ।।

शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं
यशश्चारु चित्रं धनं मेरुतुल्यम् ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ।। १ ।।

यदि शरीर रूपवान हो, पत्नी भी रूपसी हो और सत्कीर्ति चारों दिशाओं में विस्तरित हो, मेरु पर्वत के तुल्य अपार धन हो, किन्तु गुरु के श्रीचरणों में यदि मन आसक्त न हो तो इन सारी उपलब्धियों से क्या लाभ ?

कलत्रं धनं पुत्रपौत्रादि सर्वं
गृहं बान्धवाः सर्वमेतद्धि जातम् ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ।। २ ।।

सुन्दरी पत्नी, धन, पुत्र-पौत्र, घर एवं स्वजन आदि प्रारब्ध से सर्व सुलभ हो किन्तु गुरु के श्रीचरणों में मन की आसक्ति न हो तो इस प्रारब्ध-सुख से क्या लाभ ?

षडंगादिवेदो मुखे शास्त्रविद्या
कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ।। ३ ।।

वेद एवं षट्वेदांगादि शास्त्र जिन्हें कंठस्थ हों, जिनमें सुन्दर काव्य-निर्माण की प्रतिभा हो, किन्तु उसका मन यदि गुरु के श्रीचरणों के प्रति आसक्त न हो तो इन सद्गुणों से क्या लाभ ?

विदेशेषु मान्यः स्वदेशेषु धन्यः
सदाचारवृत्तेषु मत्तो न चान्यः ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ।। ४ ।।

जिन्हें विदेशों में समादर मिलता हो, अपने देश में जिनका नित्य जय-जयकार से स्वागत किया जाता हो और जो सदाचारपालन में भी अनन्य स्थान रखता हो, यदि उसका भी मन गुरु के श्रीचरणों के प्रति अनासक्त हो तो इन सद्गुणों से क्या लाभ ?

क्षमामण्डले भूपभूपालवृन्दैः
सदा सेवितं यस्य पादारविन्दम् ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ।। ५ ।।

जिन महानुभाव के चरणकमल पृथ्वीमण्डल के राजा-महाराजाओं से नित्य पूजित रहा करते हों, किन्तु उनका मन यदि गुरु के श्रीचरणों में आसक्त न हो तो इस सद्भाग्य से क्या लाभ ?

यशो मे गतं दिक्षु दानप्रतापात्
जगद्वस्तु सर्वं करे सत्प्रसादात् ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ।। ६ ।।

दानवृत्ति के प्रताप से जिनकी कीर्ति दिग्दिगान्तरों में व्याप्त हो, अति उदार गुरु की सहज कृपा-दृष्टि से जिन्हें संसार के सारे सुख-ऐश्वर्य हस्तगत हों, किन्तु उनका मन यदि गुरु के श्रीचरणों में आसक्तिभाव न रखता हो तो इन सारे ऐश्वर्यों से क्या लाभ ?

न भोगे न योगे न वा वाजिराजौ
न कान्तामुखे नैव वित्तेषु चित्तम् ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ।। ७ ।।

जिनका मन भोग, योग, अश्व, राज्य, स्त्रीसुख और धनोपभोग से कभी विचलित न हुआ हो, फिर भी गुरु के श्रीचरणों के प्रति आसक्त न बन पाया हो तो मन की इस अटलता से क्या लाभ ?

अरण्ये न वा स्वस्य गेहे न कार्ये
न देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥ ८ ॥

जिनका मन वन या अपने विशाल भवन में, अपने कार्य या शरीर में तथा अमूल्य भंडार में आसक्त न हो, पर गुरु के श्रीचरणों में भी यदि वह मन आसक्त न हो पाये तो उसकी सारी अनासक्तियों का क्या लाभ ?

अनर्घ्याणि रत्नादि मुक्तानि सम्यक्
समालिंगिता कामिनी यामिनीषु ।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥ ९ ॥

अमूल्य मणि-मुक्तादि रत्न उपलब्ध हों, रात्रि में समालिंगिता विलासिनी पत्नी भी प्राप्त हो, फिर भी मन गुरु के श्रीचरणों के प्रति आसक्त न बन पाये तो इन सारे ऐश्वर्य-भोगादि सुखों से क्या लाभ ?

गुरोरष्टकं यः पठेत्पुण्यदेही
यतिर्भूपतिर्ब्रह्मचारी च गेही ।
लभेत् वांछितार्थ पदं ब्रह्मसंज्ञं
गुरोरुक्तवाक्ये मनो यस्य लग्नम् ॥ १० ॥

जो यती, राजा, ब्रह्मचारी एवं गृहस्थ इस गुरु-अष्टक का पठन-पाठन करता है और जिसका मन गुरु के वचन में आसक्त है, वह पुण्यशाली शरीरधारी अपने इच्छितार्थ एवं ब्रह्मपद इन दोनों को सम्प्राप्त कर लेता है यह निश्चित है ।

*

संत-प्रसाद की महिमा

[समाज की बिगड़ी हुई स्थिति को देखते हुए समाज में जागृति लाने के लिए आज से दो ढाई वर्ष पूर्व भावनगर में दिये गये सत्संग की कैसेट 'भारत जागृति' भाग : २ (गुज.) से संकलित :]

जिसके ऊपर संत का हृदय खुश हो, उस पर भगवान खुश हैं । उसे भला, किस बात की कमी ?

संत द्वारा दिया गया प्रसाद भले मिट्टी की ढेली हो, फिर भी उसमें देनेवाले का प्रेम एवं संकल्प होता है । तुम्हारा प्रेम जाग उठे तो तुमसे दिये बिना नहीं रहा जायेगा । तुम खुश होते हो तो तुम्हारे द्वारा कुछ-न-कुछ दिया जाता है । जो व्यक्ति खुश हुआ हो और कुछ देता न हो तो समझ जाना चाहिए कि उसकी खुशी अभी पूरी तरह नहीं छलक पायी है । फूल नहीं तो फूल की पंखूड़ी ही सही, देने का भाव जब आता है तभी सामनेवाले के प्रति तुम्हारी खुशी साबित होती है ।

कई लोग यहाँ व्यासपीठ पर हार पहनाने आते हैं तब उनकी श्रद्धा, भक्ति एवं नम्रता देखकर... मेरे पास पकवानादि तो नहीं होते, सर्टिफिकेट तो नहीं होते, किन्तु अंदरवाला मुझसे जो करवाता है वह करता हूँ। दूसरा कुछ नहीं तो एकाध फूल या फूल की पंखुड़ी उठाकर ही उन्हें दे देता हूँ। उस समय मेरा आनंद एवं मेरे अंतर्यामी की सहमति उनके हृदय को कुछ-न-कुछ उन्नत करती ही है। (तालियों की गड़गड़ाहट)

बड़े-बड़े हार में से मैं एक फूल दे देता हूँ और वे उस फूल को मस्तक पर चढ़ाते हैं। यहाँ कीमत फूल की नहीं, किन्तु देनेवाले अंतर्यामी के प्रसाद की होती है।

आप मंदिर में या संत के द्वार पर मिठाई या फल की टोकरियाँ लेकर जाते हो और वे संत पुरुष अंतर्यामी ईश्वर का प्रसाद समझकर दृष्टिपात करके उनमें से कुछ उठाकर देते हैं तो बड़ी श्रद्धा से आप ले लेते हो। तब कोई आपसे कहे कि : 'ओ हो हो... प्रसाद के लिए इस प्रकार हाथ लंबे करते हो ! चलो, सेठजी ! मैं आपको एक किलो मिठाई दिलवा दूँ।' तो आप कहोगे कि : 'रहने दो तुम्हारी एक किलो मिठाई। एक किलो तो क्या, मैं तुम्हें १० किलो दिलवा दूँ किन्तु यह तो भगवान का प्रसाद है, संत के हाथ का प्रसाद है...'

एक तो अत्यंत दुर्लभ मनुष्य जन्म, फिर सत्संग और साधना की गुरु-निर्दिष्ट पद्धतियाँ, पाने को तत्त्वज्ञान... फिर भी हम दुःखी ? बड़ी शर्म की बात है । भैया ! क्यों, चिंतित होते हो ? अंतर्यामी की शरण जाओ और धन्य-धन्य हो जाओ । देरी किस बात की ?

भारतीय संस्कृति की गरिमा के रक्षक : स्वामी विवेकानंद

[स्वामी विवेकानंद जयंती २० जनवरी पर विशेष]

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

आज से १०४ वर्ष पूर्व सन् १८९३ में शिकागो में जब विश्वधर्म परिषद (world Religious Parliament) का आयोजन हुआ था तब भारत के धर्मप्रतिनिधि के रूप में स्वामी विवेकानंद वहाँ गये थे। विश्वधर्म परिषदवाले मानते थे कि 'ये तो भारत के कोई मामूली साधु हैं। इन्हें तो प्रवचन के लिए पाँच मिनट भी देंगे तो भी शायद कुछ बोल नहीं पाएँगे...'

उन्होंने स्वामी विवेकानंद के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार किया और उनका मखौल उड़ाते हुए कहा :

''सब धर्मग्रंथों में आपका ग्रंथ सबसे नीचे है, अतः आप शून्य पर बोलें।''

प्रवचन की शुरूआत में स्वामी विवेकानंद द्वारा किये गये उद्‌बोधन 'मेरे प्यारे अमेरिका के भाइयों और बहनों !' को सुनते ही श्रोताओं में इतना उल्लास छा गया कि दो मिनट तक तो तालियों की गड़गड़ाहट ही गूँजती रही। तत्पश्चात् स्वामी विवेकानंद ने मानो सिंहगर्जना करते हुए कहा :

''हमारा धर्मग्रंथ सबसे नीचे है। उसका अर्थ यह नहीं है कि वह सबसे छोटा है अपितु सबकी संस्कृति का मूलरूप, सब धर्मों का आधार हमारा धर्मग्रंथ ही है। यदि मैं उस धर्मग्रंथ को हटा लूँ तो आपके सभी ग्रंथ गिर जाएँगे। भारतीय संस्कृति ही महान् है तथा सर्व संस्कृतियों का आधार है। **नेति... नेति...** करते हुए वेद जिसका वर्णन करने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं, जिस चैतन्य आत्मा-परमात्मा की शक्ति से समग्र विश्व संचालित होता है उस चैतन्य तत्त्व का ज्ञान पाना यही भारत की आध्यात्मिक संस्कृति का बीज मंत्र है और इसीलिए भारतीय संस्कृति विश्व में सर्वोच्च है, सर्वोपरि है।''

हिंदू धर्म को ऊपर-ऊपर से देखकर टीका करनेवालों के समक्ष गंभीरता एवं सामर्थ्य से सच्चाई पेश करने में उन्होंने कीर्ति-अपकीर्ति के प्रश्न की परवाह नहीं की। परिषद में अपने प्रवचन के दौरान् उन्होंने सभा को ललकारते हुए कहा :

''जिन्होंने स्वयं हिंदू धर्म के शास्त्र पढ़कर, इस धर्म का ज्ञान प्राप्त किया हो - ऐसे लोग हाथ ऊपर उठायें।''

...और उस विशाल सभा में कितने हाथ ऊपर उठे ? बस, केवल तीन-चार। देश-विदेश के धर्माध्यक्ष एवं संस्कारी पुरुषों की उस सभा में हिंदू धर्म का ज्ञान रखनेवाले केवल तीन-चार व्यक्ति ही थे।

तत्पश्चात् सभाजनों पर मधुर कटाक्ष करते हुए विवेकानंद ने कहा :

''...और इसके बावजूद भी आप हमारा मूल्यांकन करने की धृष्टता कर रहे हो ?''

उस धर्मपरिषद में विवेकानंद को प्रवचन के लिए पाँच मिनट देने में भी जिन्हें तकलीफ होती थी, वे ही आयोजक उनके प्रवचनों के लिए श्रोताओं की ओर से प्राप्त सम्मान को देखकर दिग्मूढ़ हो रहे थे।

विश्वधर्मपरिषद के विज्ञान शाखा के प्रमुख ऑनरेबल मेरविन-मेरी-स्नेल ने लिखा है :

''धर्मपरिषद पर एवं अधिकांश अमेरिकन लोगों पर हिंदू धर्म ने जितना प्रभाव अंकित किया उतना अन्य किसी धर्म ने अंकित नहीं किया।''

ऐसी महान् संस्कृति एवं धर्म की सुरक्षा करने के बजाय हम पश्चिम की संस्कृति का अंधानुकरण करने से मुक्त नहीं हो रहे हैं यह हमारे समाज और देश के लिए कितनी शर्मजनक बात है !
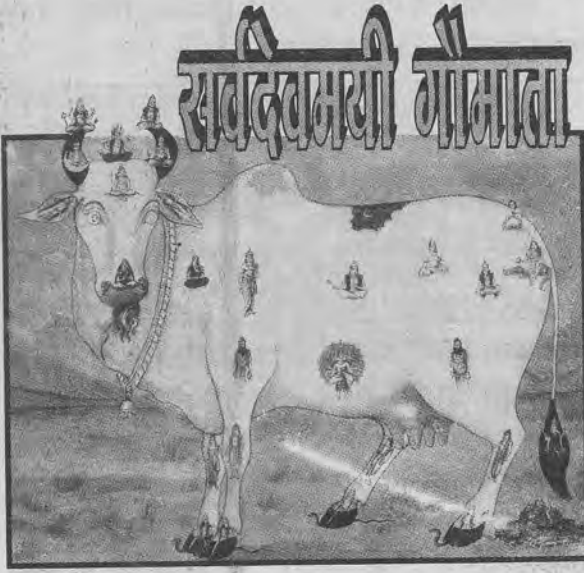
गौमाता : अनवरतपोषिका

(गतांक का शेष)

मट्ठा : गाय के दूध के मट्ठे को तो अमृत कहा गया है। इसका स्वाद हल्का खट्टा तथा कसैला होता है। वैद्य लोग ऐसा मानते हैं कि नियमितरूप से मट्ठा पीनेवाले को रोग नहीं होता तथा औषधि के रूप में प्रयोग करने से रोग पुनः कभी नहीं उखड़ता है। श्वास के रोगियों को छोड़कर सभी मनुष्य इसका प्रयोग कर सकते हैं। यह बहुत ही पौष्टिक तथा गुणकारी होता है।

क्रीम : कच्चे दूध से अलग की गई वसा को क्रीम कहते हैं। यह हल्की पीली, खनिज, विटामिन तथा पौष्टिक तत्त्वों से भरपूर होती है। इसका प्रयोग सामान्यतः मक्खन या व्यंजन बनाने में किया जाता है।

मक्खन : क्रीम से मक्खन बनाया जाता है। यह हल्के खट्टेपनवाले स्वाद का हल्का पीला तथा पौष्टिक पदार्थों से भरपूर होता है। इसका प्रयोग आजकल सभी जगह होता है।

घी : नवनीत तथा मक्खन को गर्म करके घी बनाया जाता है। यह लगभग वसा ही होता है। इसलिए काफी समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। यह थोड़ा भारी परन्तु बहुत ही बलवर्धक होता है। गाय का एक वर्ष से अधिक समय का घी औषधि माना जाता है। किसी भी तरह के विष को अवशोषित करके शरीर से बाहर निकालता है।

छैना : दूध को फाड़कर उससे प्राप्त ठोस पदार्थ को छैना कहते हैं। इसका प्रयोग सामान्यतः छैने की मिठाइयाँ बनाने में किया जाता है। इसमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है।

पनीर : यह भी दूध को फाड़कर ही बनाया जाता है। तरह-तरह के व्यंजन बनाने में इसका प्रयोग किया जाता है।

खोया : दूध को जलाकर उससे वसा तथा प्रोटीन को ठोस अवस्था में लाकर खोया बनाया जाता है। इसका प्रयोग खोया की मिठाइयाँ बनाने में किया जाता है। यह पचने में भारी परन्तु बहुत पौष्टिक पदार्थ है।

सप्रेटा : कच्चे दूध से क्रीम निकालने के पश्चात् बचे पदार्थ को सप्रेटा कहते हैं। इसे दूध या दही के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह उच्च रक्तचाप तथा अधिक वसायुक्त शरीरवाले व्यक्तियों के लिये पौष्टिक पदार्थ के रूप में अच्छा माना जाता है।

केसीन : दूध के प्रोटीन को केसीन कहते हैं। यह मट्ठे से प्राप्त किया जाता है। केसीन का प्रयोग अनेक तरह की दवाओं में किया जाता है।

इनके अतिरिक्त गौदुग्ध से अन्य भी बहुत से पदार्थ बनाये जा सकते हैं। जैसे कि खीस से एल्व्यूमिन तथा ग्लोव्यूलिन तथा दूध से दुग्ध पाऊडर, लस्सी आदि। अब तो दूध का प्रयोग चाय तथा कॉफी के साथ घर-घर में, पूरे देश में प्रचलित है। इतने सारे पौष्टिक पदार्थ देकर गाय मानव जाति को पोषित करके कृतार्थ हो रही है।

(२) पृथ्वीपोषक : पृथ्वी का सबसे सस्ता, सुलभ तथा सुरक्षित पोषक गाय का गोबर है। खाद के रूप में यह पृथ्वी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता है, उसकी गुणवत्ता में सुधार लाता है, जल धारण करने की क्षमता बढ़ाता है, उसे प्रदूषण से मुक्त रखता है तथा विषाक्तता को कम करता है। आज अधिक पैदावार बढ़ाने के प्रयास में गोबर की खाद को छोड़कर सभी

कृषक रासायनिक खादों का अन्धाधुन्ध प्रयोग करते जा रहे हैं जिससे कुछ वर्ष तक तो पैदावार बढ़ती है परन्तु बाद में उसके परिणाम घातक ही सिद्ध होते हैं। यहाँ यह कहना समीचीन होगा कि रासायनिक उर्वरक, कीटनाशी, कवक़नाशी तथा खरपतवारनाशी दवाओं के प्रयोग से हरित क्रान्ति तो अवश्य आई है परन्तु कैन्सर, नेत्रविकार, मानसिक विकार, तंत्रिका विकार, हृदयरोग, यकृत तथा गुर्दे के रोगों में भी बेतहाशा वृद्धि हो रही है । रासायनिक उर्वरकों से नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश तो मिल जाते हैं परन्तु इनके अवशेषों से जमीन में उम्लता तथा उसरपन के लक्षण भी बढ़ते हैं। जमीन की उर्वरा शक्ति धीरे-धीरे क्षीण हो जाती है। अनाज तथा चारे में सूक्ष्म तत्त्वों की कमी हो जाती है जिससे मनुष्य तथा पशुओं में अल्पता रोगों की बढ़वार होती है। इसके विपरीत गोबर की खाद से भले ही नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश नाममात्र के ही मिलते हैं परन्तु ह्यूमस नामक पदार्थ से भूमि की संरचना सुधरती है, उर्वरा शक्ति बढ़ती है तथा सूक्ष्म तत्त्वों की प्रचुरता से अल्पता रोग होते ही नहीं हैं। पानी की कमी तथा अधिकतावाली भूमि, पहाड़ी भूमि तथा कंकरीली भूमियों पर रासायनिक खादों का प्रयोग अधिक लाभकारी नहीं हो पाता है जबकि गोबर की खाद हर तरह की भूमि में डाली जा सकती है। वैसे भी मात्र रासायनिक उर्वरकों के ऊपर बहुत लम्बे समय तक खेती करना न तो सम्भव है और न ही उचित है। इस परिप्रेक्ष्य में यदि हम गोवंश से प्राप्त गोबर का विवेचन करें तो पता चलेगा कि अप्रत्यक्षरूप से गोवंश मानव जाति का कितना बड़ा पोषक है।

वर्ष १९९१-९२ की पशु गणना के अनुसार भारत में लगभग २० करोड़ गोवंशीय पशु हैं जिनमें से १० करोड़ बैल, ५ करोड़ वयस्क गाय तथा ४ करोड़ अवयस्क गोवंशीय पशु हैं । वयस्क पशु का औसत भार ३५० किलोग्राम तथा अवयस्क का १२० किलोग्राम माना जाता है । एक स्वस्थ बैल से ८ से १७ किलोग्राम गोबर प्रतिदिन मिलता है। कुल गोवंशीय पशुओं से सारणी-१ के अनुसार गोबर प्राप्त होता है।

सारणी : १ गोवंशीय पशुओं से अनुमानित गोबर उत्पादन :

	संख्या (करोड़ में)	औसत गोबर एक दिन में (कि.ग्रा.)	कुल गोबर एक दिन में (करोड़ कि.ग्रा.)	शुष्क गोबर (५०%) (करोड़ कि.ग्रा.)
१. अवयस्क	५	८	४०	२०
२. वयस्क मादा	५	२५	१२५	६२.५
३. वयस्क नर	१०	१५	१५०	७५
कुल मात्रा (कि. ग्रा. में)			३१५	१५७.५
कुल मात्रा (लाख टन में)			३१.५	१५.७५

अतः कुल गोवंशीय पशुओं से ३१.५ लाख टन गोबर प्रतिदिन मिलता है। अथवा ११४९७.५ लाख टन ताजा तथा ५७४८.७५ लाख टन शुष्क गोबर प्रतिवर्ष मिलता है। यदि नडेव विधि द्वारा कम्पोस्ट खाद बनाया जाय तो १०० कि.ग्रा. गोबर से ३००० कि.ग्रा. उत्तम खाद बनाया जा सकता है । अतः ११४९७.५ लाख टन गोबर से ३४४९२५ लाख टन अच्छा खाद प्रतिवर्ष मिल सकता है जो भारत की पूरी भूमि को पोषित करने के लिए पर्याप्त है। इससे हमारी भूमि तो पोषित होगी ही, उसकी जलधारण की क्षमता बढ़ेगी, पानी का प्रदूषण, खाद पदार्थों की विषाक्तता तथा अल्पता रोगों की कमी होगी। गाय के गोबर से मिलनेवाले नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश तथा सूक्ष्म तत्त्वों के साथ ह्यूमस भी मिलेगा। इसके प्रयोग से पृथ्वी के प्रदूषण तथा विषाक्तता में कमी तथा रोगों की कमी का मूल्यांकन आज भले ही न कर पायें परन्तु भविष्य में एक-न-एक दिन इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना ही पड़ेगा। भले ही आज हम गाय के गोबर का वास्तविक भौतिक मूल्य न आँक पायें लेकिन मात्र खाद के रूप में गाय के गोबर से हमारी पृथ्वी किस तरह पोषित होती है तथा बदले में वह मानव जाति को पोषित करती है यह सत्य हमें स्वीकारना ही पड़ेगा।

(क्रमशः)

तुलसी

तुलसी एक सर्व परिचित वनस्पति है। किसी भी स्थान पर उगनेवाली इस तुलसी का स्थान भारतीय धर्म-संस्कृति में पवित्र और महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक हिन्दू के घर-आँगन में तुलसी-क्यारे का होना घर की शोभा, घर के संस्कार, पवित्रता तथा धार्मिकता का अनिवार्य प्रतीक है। मात्र भारत में ही नहीं, वरन् विश्व के कई अन्य देशों में भी तुलसी को पूजनीय व शुभ माना गया है।

ग्रीस में इस्टर्न चर्च नामक संप्रदाय में भी तुलसी की पूजा होती थी और सेंट बेजिल जयंती के दिन 'नूतन वर्ष भाग्यशाली हो' इस भावना से देवल में चढ़ाई गई तुलसी के प्रसाद को स्त्रियाँ घर में ले जाती थीं।

समस्त वृक्षों-वनस्पतियों में सर्वाधिक धार्मिक, आध्यात्मिक, आरोग्यलक्ष्मी एवं शोभा की दृष्टि से तुलसी को मानव-जीवन में महत्त्वपूर्ण, पवित्र तथा श्रद्धेय स्थान मिला है।

प्रदूषित वायु के शुद्धिकरण में भी तुलसी का योगदान श्रेष्ठ है। यदि तुलसीवन के साथ प्राकृतिक चिकित्सा की कुछ पद्धतियाँ जोड़ दी जाएँ तो प्राणघातक और दुःसाध्य रोगों को भी निर्मूल करने में ऐसी सफलता मिल सकती है जो प्रसिद्ध डॉक्टरों व सर्जनों को भी नहीं मिल सकती।

तुलसी शारीरिक व्याधियों को तो दूर करती ही है, साथ ही मनुष्य के आंतरिक भावों और विचारों पर भी कल्याणकारी प्रभाव डालती है।

भारत के अनेक भागों में मलेरिया का प्रकोप विशेषतः देखने को मिलता है जो कि वर्षा ऋतु के अंतिम भाग में मच्छर के काटने से फैलता है। **तुलसी के पौधे में मच्छरों को दूर भगाने का गुण है और इसकी पत्तियाँ खाने से मलेरिया के दूषित तत्त्वों का मूलतः नाश होता है।** तुलसी और कालीमिर्च का काढ़ा बनाकर पीने के आसान तरीके से ज्वर दूर किया जा सकता है।

२५ मार्च १९८८ के गुजराती अखबार में 'तुलसी' को श्रेष्ठ आरोग्यप्रद बताते हुए पी. टी. आई. संस्था ने लिखा है : 'तिरुपति के एस. वी. विश्वविद्यालय में किये गये एक अध्ययन के अनुसार तुलसी का पौधा उच्छ्वास में स्फूर्तिप्रद ओजोन वायु छोड़ता है जिसमें ऑक्सीजन के दो के स्थान पर तीन परमाणु होते हैं।

तुलसी के गुणगान का एक अद्भुत काव्य है :

रस में तीखी है और अनुरस में कडवी है।
गुण में उष्ण, हल्की और रुखी है।
कफ तथा वायु के रोग मिटानेवाली है।
भूख लगानेवाली और पाचन करनेवाली है।
बुद्धि बढ़ानेवाली और सात्त्विकता देनेवाली है।
दृष्टि बढ़ानेवाली और हृदय-हितकारिणी है।
सुरभित होने से तुलसी स्वाद बढ़ानेवाली है।

प्रसिद्ध निसर्गोपचारक कहते हैं कि :

'तुलसी की पत्तियों को दही या छाछ के साथ सेवन करने से वजन कम होता है, शरीर की चरबी कम होती है अतः शरीर सुडौल बनता है। साथ ही थकान मिटती है। दिनभर स्फूर्ति बनी रहती है और रक्तकणों में वृद्धि होती है।

भारत की यात्रा पर आए हुए विक्टर रेसी नामक एक फ्रेंच डॉक्टर ने बनारस शहर घूमने के दौरान 'बनारस हिंदू युनिवर्सिटी' के फार्माकोलोजी विभाग द्वारा आयोजित एक व्याख्यानमाला में बताया था कि : 'तुलसी एक वंडरड्रग है।' ब्लडप्रेशर के नियमन, पाचनतंत्र के नियमन तथा रक्तकणों की वृद्धि के अतिरिक्त मानसिक रोगों में भी तुलसी के प्रयोग से असाधारण सफल परिणाम प्राप्त हुए हैं। मलेरिया और अन्य कई प्रकार के ज्वरादि को रोकने में भी तुलसी का प्रयोग अत्यंत उपयोगी है।

✲ **अथर्ववेद में आता है** : 'यदि त्वचा, मांस तथा अस्थि में महारोग प्रविष्ट हो गया हो तो उसे श्याम तुलसी नष्ट कर देती है। तुलसी के दो भेद होते हैं : हरे पत्तेवाली और श्याम (काले) पत्तेवाली। श्याम तुलसी सौंदर्यवर्धक है। इसके सेवन से रोगिष्ठ त्वचा के सभी रोग नष्ट हो जाते हैं और त्वचा पुनः मूल स्वरूप धारण करती है। तुलसी त्वचा के लिए अद्‌भुत रूप से गुणकारी है।'

✲ **चरक सूत्र** : २७.१६९ में आता है : 'तुलसी हिचकी, खाँसी, विषदोष, श्वास और पार्श्वशूल को नष्ट करती है। वह पित्त को उत्पन्न करती है एवं वात, कफ और मुँह की दुर्गंध को नष्ट करती है।'

✲ **स्कंदपुराण** : २,४,८,१३ एवं **पद्मपुराण** के उत्तरखण्ड में आता है कि : 'जिस घर में तुलसी का पौधा होता है वह घर तीर्थ के समान है। वहाँ व्याधिरूपी यमदूत प्रवेश ही नहीं कर सकते।'

✲ चाय तो हानिकारक है लेकिन चाय के स्थान पर तुलसी आदि से तैयार की जानेवाली वनस्पति चाय लाभ पहुँचाती है।

✲ तुलसी किडनी की कार्यशक्ति में वृद्धि करती है। तुलसी के रस में शहद मिलाकर देने से एक केस में किडनी की पथरी छह माह के निरंतर उपचार से बाहर निकल गई थी।

इण्ट्राटेकिथल कैन्सर से पीड़ित एक रोगी पर ऑपरेशन तथा अन्य अनेक उपचार करने के बाद अंत में आशा छोड़कर डॉक्टरों ने घोषित किया कि 'रोगी का यकृत खराब हो रहा है। यक्ष्मा में भी वृद्धि हो रही है। अब यह रोग लाइलाज है।'

तभी एक वैद्य ने उक्त विधान के विरुद्ध चुनौती दी। रोगी को पाँच सप्ताह तक केवल तुलसी का सेवन करवाया और वह इतना स्वस्थ हो गया कि एक मील तक पैदल चल सकता था।

✲ हृदयरोग से पीड़ित कई रोगियों के हाईब्लडप्रेशर तुलसी के उपचार से सामान्य हो गये हैं, हृदय की दुर्बलता कम हो गई है और रक्त में चर्बी की वृद्धि रुकी है। जिन्हें पहाड़ी स्थानों पर जाने की मनाही थी ऐसे अनेक रोगी तुलसी के नियमित सेवन के बाद आनंद से ऊँचाईवाले स्थानों पर हवाखोरी के लिए जाने में समर्थ हुए हैं।

✲ एक लड़का बचपन से ही मंद बुद्धि का था। सोलह वर्षों तक उसके अनेक उपचार हुए किन्तु उसकी बौद्धिक मंदता दूर नहीं हुई। तुलसी के नियमित सेवन से दो ही महीनों के भीतर उसमें बुद्धिमत्ता के लक्षण दिखाई पड़े। समय बीतने पर वह और भी अधिक बुद्धिशाली हो गया।

आपके बच्चों को भी तुलसीपत्र देने के साथ सूर्यनमस्कार करवाने और सूर्य को अर्घ्य दिलवाने के प्रयोग से बुद्धि में विलक्षणता आयेगी। आश्रम के पूज्य नारायण स्वामी ने भी इस प्रयोग से बहुत लाभ उठाया है।

✲ सफेद दाग या कोढ़ के अनेक रोगियों को तुलसी के उपचार से अद्‌भुत लाभ हुआ है। अनेक दाग कम हो गए हैं और उनकी त्वचा सामान्य हो गई है।

✲ प्रतिदिन प्रातःकाल खाली पेट पानी के साथ तुलसी की पाँच-सात पत्तियों का सेवन करने से बल, तेज और स्मरणशक्ति बढ़ती है। तुलसी के काढ़े में थोड़ी शक्कर मिलाकर पीने से स्फूर्ति आती है और थकावट दूर होती है। जठराग्नि प्रदीप्त रहती है। इसके रस में नमक मिलाकर उसकी बूँदे नाक में डालने से मूर्च्छा दूर होती है, हिचकियाँ भी शांत हो जाती हैं।

✲ तुलसी ब्लडं कॉलेस्ट्रोल को बहुत तेजी के साथ सामान्य बना देती है। तुलसी के नित्य सेवन से एसिडिटी दूर होती है। पेचिश, कोलाइटिस आदि मिट जाते हैं। स्नायु का दर्द, जुकाम, सर्दी, सफेद दाग, मेदवृद्धि, सिरदर्द आदि में यह गुणकारी है। तुलसी का रस, अदरक का रस एवं शहद समभाग में मिश्रित करके बच्चों को चटाने से बच्चों के कुछ रोगों में विशेषकर सर्दी, दस्त, उल्टी और कफ में लाभ होता है। हृदयरोग और उसकी आनुषंगिक निर्बलता और बीमारी में तुलसी के उपयोग से आश्चर्यजनक सुधार होता है।

तुलसी के पौधे संत श्री आसारामजी आश्रम में

निःशुल्क मिल सकते हैं।

प्रतिदिन तुलसी–बीज जो पान संग नित खाय।
रक्त, धातु दोनों बढ़े, नामर्दी मिट जाए ॥
ग्यारह तुलसी–पत्र जो, स्याह मिर्च संग चार।
तो मलेरिया इक्तरा, मिटे सभी विकार ॥

✲ वजन बढ़ाना हो या घटाना हो, तुलसी का सेवन करें। इससे शरीर स्वस्थ और सुडौल बनता है। मंदाग्नि, कब्जियत, गैस, अम्लता आदि रोगों के लिए तुलसी रामबाण औषधि सिद्ध हुई है।

✲ तुलसी के क्यारे के पास प्राणायाम करने से सौंदर्य, स्वास्थ्य और तेज की वृद्धि करने में यह अत्युत्तम है।

✲ तुलसी की सूखी पत्तियों को पीसकर उसके चूर्ण को पाऊडर की तरह चेहरे पर रगड़ने से चेहरे की कांति बढ़ती है और चेहरा सुंदर दिखता है।

✲ मुँहासों के लिए भी तुलसी खूब उपयोगी है।

✲ ताँबे के बर्तन में नींबू के रस को २४ घण्टे तक रख छोड़िए। फिर उसमें इतनी ही मात्रा में काली तुलसी का रस तथा काली कसौंडी (कसौंजी) का रस मिलाइए। इस मिश्रण को धूप में सुखाकर गाढ़ा कीजिए। इस लेप को चेहरे पर लगाइए। धीरे-धीरे चेहरा स्वच्छ, चमकदार, सुंदर, तेजस्वी बनेगा व कांति बढ़ेगी।

✲ कालीमिर्च, तुलसी और गुड़ का काढ़ा बनाकर उसमें नींबू का रस मिलाकर, दिन में दो-दो या तीन-तीन घण्टे के अंतर से गर्म-गर्म पियें, फिर कंबल ओढ़कर सो जाएँ। यह काढ़ा मलेरिया को दूर करता है।

✲ श्लेष्मक ज्वर (इन्फ्लुएन्जा) के रोगी को तुलसी का २० ग्राम रस, अदरक का १० ग्राम रस तथा शहद मिलाकर दें।

✲ तुलसी की जड़ें कमर में बाँधने से स्त्रियों को, विशेषतः गर्भवती स्त्रियों को लाभ होता है। प्रसव वेदना कम होती है और प्रसूति भी सरलता से हो जाती है।

✲ तुलसी की पत्तियों का रस २० ग्राम, चावल के माँड़ के साथ सेवन करने से तथा दूध-भात या घी-भात का पथ्य लेने से प्रदर रोग दूर होता है।

✲ तुलसी के मूल के छोटे-छोटे टुकड़े करके पान में सुपारी की तरह खाने से स्वप्नदोष की शिकायत दूर हो जाती है।

✲ तुलसी की पत्तियों के साथ थोड़ी इलाइची तथा १० ग्राम सुधामूली का काढ़ा नियमित लेने से स्वप्नदोष में लाभ होता है। यह एक पौष्टिक द्रव्य के रूप में भी काम करता है।

✲ दमे के रोग में तुलसी का पंचांग, ऑक के पीले पत्ते, अडूसा के पत्ते, भंग तथा थूहर की डाली पाँच-पाँच ग्राम लेकर बारीक चूर्ण बनाइए। उसमें थोड़ा साँभर नमक डालिए। इसे मिट्टी के एक बर्तन में भरकर ऊपर से कपड़-मिट्टी करके बंद कर दीजिए। केवल जंगली लकड़ी की आग में उसे एक प्रहर (तीन घण्टे) तक तपाइए। ठंडा होने पर उसे अच्छी तरह पीसिए और छानकर रहने दीजिए। दमे की शिकायत होने पर प्रतिदिन पाँच ग्राम चूर्ण शहद के साथ तीन बार लें।

✲ तुलसी की पत्तियों को नींबू के रस में पीसकर लगाने से दाद-खाज मिट जाती है।

✲ तुलसी का पाऊडर व सूखे आँवलों का प्राऊडर पानी में भीगोकर रख दीजिए। प्रातःकाल उसे छानकर उस पानी से सिर धोने से सफेद बाल भी काले हो जाते हैं तथा बालों का झड़ना रुक जाता है।

✲ तमाम कुष्ठरोग अस्पतालों में तुलसीवन बनाकर तुलसी के कुष्ठरोग-निवारक गुण का लाभ लिया जा सकता है।

✲ तुलसी और अदरक का रस शहद के साथ लेने से उल्टी में लाभ होता है।

✲ पेट में दर्द होने पर तुलसी की ताजी पत्तियों का १० ग्राम रस पियें।

इस तरह तुलसी बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। आरोग्यता की दृष्टि से उनमें से कुछ अंश ही ऊपर बताये गए हैं। हमें चाहिए कि हम लोग तुलसी का पूर्ण लाभ लें। यदि हम अपने घर के आँगन में, पिछवाड़ेवाले भाग में, झरोखे में या जहाँ निरंतर सूर्यप्रकाश उपलब्ध हो सके ऐसी जगह तुलसी का

कम-से-कम एकाध पौधा तो लगायें ही। उसकी हवा से अपने और पड़ोसी के वातावरण की शुद्धि की सेवा हो जाएगी। हो सके तो आश्रम में से तुलसीबीज ले जाकर तालाब, सरोवर, नहर, डेम आदि जगहों पर तुलसीबीज डालकर उगाने से वातावरण में व्यापक सुधार हो सकता है। सरकार को चाहिए कि सरकारी नर्सरी में भी तुलसी के पौधे हों ऐसी व्यवस्था करे। इस तुलसी के लेख को अपने-अपने इलाकों के समाचार पत्रों में प्रकाशित करवाकर व्यापक प्रचार-प्रसार करें। फिर सौंदर्यवान एवं आयुष्यमान बनने के लिए हमें बाह्य प्रसाधनों तथा उपचारों का आश्रय नहीं लेना पड़ेगा। अमदावाद व सूरत आश्रम से तुलसी के पौधे प्राप्त कर सकते हैं और जगह-जगह पौधे लगाकर व तुलसी के बीज डालकर जहाँ-तहाँ उगवाकर वातावरण को शुद्ध, पवित्र कर स्वस्थ करें तथा स्वस्थ रहें।

*

सूखा मेवा

सूखे मेवे में अखरोट, बदाम, काजू, किसमिस, अंजीर, पिस्ता, खारक, चारोली, नारियल वगैरह का समावेश होता है।

सूखे मेवे अर्थात् ताजे फलों के उत्तम भागों का सुखाया गया पदार्थ। ताजे फलों का बारहों महीने मिलना मुश्किल है। सूखे मेवों से दूसरी ऋतु में भी फलों के उत्तम गुणों का लाभ लिया जा सकता है और उसके बिगड़ने की संभावना भी ताजे फलों की अपेक्षा कम होती है। कम मात्रा में लेने पर भी ये फलों की अपेक्षा ज्यादा लाभकारी सिद्ध होते हैं।

आचार्य चरक एवं पंडित भावमिश्र ने इस सूखे मेवे का उल्लेख 'गुरु' अर्थात् पचने में भारी पदार्थ के रूप में किया है। इसीलिए इसका प्रयोग शीत ऋतु में किया जा सकता है क्योंकि शीत ऋतु में अन्य ऋतुओं की अपेक्षा व्यक्ति की जठराग्नि प्रबल होती है।

चरक के मतानुसार सूखे मेवे गुरु, उष्ण, स्निग्ध, मधुर होने से बलप्रद, वातनाशक, पौष्टिक एवं वीर्यवर्धक होते हैं। वे उष्ण गुण द्वारा शरीर को ठंडी के सामने रक्षा करने हेतु आवश्यक गर्मी प्रदान करते हैं।

इन सूखे मेवों में कैलोरी बहुत कम होती है जिससे अपने 'फीगर' को बनाये रखने के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति के लिए खूब उपयोगी हैं। शरीर को 'फिट' रखने के लिए रासायनिक दवाओं का उपयोग करने की जगह सूखे मेवों का उपयोग करना ज्यादा उचित है।

सूखे मेवे में विद्यमान फल-शर्करा खूब सुपाच्य होती है जिससे प्रमेह (डायबिटीज) के मरीज वैद्य की सलाह के अनुसार दवा के रूप में उनका उपयोग कर सकते हैं।

अपने रोज-बरोज के आहार में क्षार का प्रमाण खूब कम होता है। उस क्षारतत्त्व की पूर्ति सूखे मेवे के उपयोग द्वारा भी की जा सकती है।

सूखे मेवे में कैलोरी कम होती है किन्तु विटामिन ताजे फलों की अपेक्षा ज्यादा होते हैं।

* बदाम *

बदाम गरम, स्निग्ध, वायु को दूर करनेवाली, वीर्य को बढ़ानेवाली है। (भावप्रकाश) बदाम बलप्रद एवं पौष्टिक है किन्तु पित्त एवं कफ को बढ़ानेवाली है, पचने में भारी है तथा रक्तपित्त के विकारवालों के लिए अच्छी नहीं है।

शरीरपुष्टि : रात्रि को ४-५ बदाम पानी में भीगोकर, सुबह दूध में उबालकर, उसमें मिश्री एवं घी डालकर ठंडा होने पर पियें। इस प्रयोग से शरीर हृष्ट-पुष्ट होता है एवं दिमाग का विकास होता है। पढ़नेवाले विद्यार्थियों के लिए यह प्रयोग खूब उपयोगी है। बच्चों को २-३ बदाम दी जा सकती है। इस दूध में अश्वगंधा पाऊडर भी डाला जा सकता है।

बदाम का तेल : सौंदर्य के इच्छुक व्यक्ति के लिए बदाम का तेल खूब उपयोगी है। इस तेल की मालिश से त्वचा का सौंदर्य खिल उठता है। इसके अलावा वह शरीर की पुष्टि भी करता है। अल्प विकसित स्तनयुक्त बहनों को रोज इस तेल की

मालिश करनी चाहिए। नाक में इस तेल की ३-४ बूँदें डालने से मानसिक दुर्बलता दूर होकर सिरदर्द मिटता है। इस तेल को गर्म करके कान में ३-४ बूँदें डालने से कान का बहरापन दूर होता है।

नोट : पिस्ता के गुण-धर्म बदाम जैसे ही हैं।

* अखरोट *

अखरोट बदाम के समान होने से कफ व पित्त बढ़ानेवाली है (भावप्रकाश)। स्वाद में मधुर, स्निग्ध, उष्माप्रद, शीतल, रुचिकर, भारी तथा धातु को पुष्ट करनेवाली है।

दूध बढाने के लिए : गेहूँ के आटे में अखरोट के पाऊडर को मिलाकर उसका हलवा बनाकर खाने से स्तनपान करानेवाली माताओं का दूध बढ़ता है।

धातुस्राव में : अखरोट की छाल की भस्म में समान मात्रा में शक्कर मिलाकर रोज १० ग्राम चूर्ण पानी के साथ लेना चाहिए।

मासिक शुद्धि : अखरोट की छाल के काढ़े में पुराना गुड़ मिलाकर पीने से मासिक साफ आता है और बंद हुआ मासिक भी शुरू हो जाता है।

दाँत साफ करने हेतु : अखरोट की छाल के पाऊडर को सावधानीपूर्वक घिसने से दाँत सफेद होते हैं।

दंतमंजन : अखरोट की छाल को जलाकर उसका १०० ग्राम चूर्ण, कंटीला १० ग्राम, मुलहठी का चूर्ण ५० ग्राम, कच्ची फिटकरी का चूर्ण ५ ग्राम एवं वायविडंग का चूर्ण १० ग्राम लें। इस चूर्ण में बरास कपूर मिला लें। इस मंजन से दाँत का सड़ना मिटता है एवं दाँतों से खून निकलता हो तो बंद होता है।

अखरोट का तेल : चेहरे पर अखरोट के तेल की मालिश करने से चेहरे का लकवा मिटता है।

सूजन : अखरोट का १० से ३० ग्राम तेल, रोज गोमूत्र के साथ पीने से वातदोषजन्य सूजन मिटती है।

इस तेल के प्रयोग से कृमि मिटते हैं। दिमाग की कमजोरी, चक्कर आना वगैरह दूर होता है। चश्मा दूर करने के लिए आँखों के बाहर मालिश करें।

रोमेश भंडारी
राज्यपाल, उत्तर प्रदेश।

राजभवन
लखनऊ (उ. प्र.).
दिसम्बर १९९७

सन्देश

मुझे यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि पूज्य आसारामजी बापू के दुर्लभ दिव्य प्रवचनों की पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' से जन-समाज लाभान्वित हो रहा है।

भारत आदिकाल से ही ऋषि-मुनियों एवं साधु-संतों का देश रहा है। हमारी इस पावन भूमि पर समय-समय में अनेक महान् विभूतियों ने जन्म लेकर अपने ज्ञान एवं उपदेश से लोगों को मानवता का पाठ पढ़ाया है। यहीं से ही विश्वबंधुता एवं विश्वशांति का सन्देश पूरी दुनियाँ में गया है।

यह हर्ष की बात है कि आज के इस भौतिकवादी युग में पूज्य आसारामजी बापू के अमृतमय प्रवचनों से लोग समाज में व्याप्त कुरीतियों का त्याग करने तथा भारतीय संस्कृति को आत्मसात् करने के लिये आगे आ रहे हैं।

मुझे आशा है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के माध्यम से लोग पूज्य आसारामजी बापू के प्रवचनों से ज्यादा से ज्यादा लाभ उठायेंगे।

(हस्ताक्षर)
रोमेश भण्डारी

*

पू. बापू की अमृतवर्षा हरिद्वार-कुंभ मेले में

इस बार हरिद्वार के कुंभ मेले में लगे हुए अपने आश्रम के केम्प में मार्च के आखिरी दिनों से 14 अप्रैल तक श्रद्धालु जनता को पूज्यश्री के दर्शन एवं सत्संगामृत का अमूल्य लाभ प्राप्त होगा। कुंभस्नान की मुख्य तारीखें इस प्रकार हैं : 14 जनवरी '98 मकर संक्रांति * 9 फरवरी '98 * 25 फरवरी '98 महा शिवरात्रि * 28 फरवरी '98 * 29 मार्च '98 नव संवत्सर * 7 अप्रैल '98 * 13 अप्रैल '98 * 14 अप्रैल '98 मुख्य शाही स्नान-आखिरी स्नान।

(पृष्ठ १६ का शेष)

बिखेरती हुई वसंत ऋतु का आगमन हुआ। सिंधी पंचांग के अनुसार संवत् १९३७ के २३ फाल्गुन के शुभ दिवस पर टोपणदास के घर उनकी धर्मपत्नी हेमीबाई के कोख से एक सुपुत्र का जन्म हुआ।

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा पुण्यवती च येन।

'जिस कुल में महापुरुष अवतरित होते हैं वह कुल पवित्र हो जाता है। जिस माता के गर्भ से उनका जन्म होता है वह माता कृतार्थ हो जाती है एवं जिस जगह पर वे जन्म लेते हैं वह वसुन्धरा भी पुण्यशालिनी हो जाती है।'

पूरे कुटुंब एवं गाँव में आनंद की लहर छा गयी। जन्मकुंडली के अनुसार बालक का नाम रखा गया लीलाराम। आगे जाकर यही बालक लीलाराम स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज के नाम से सुप्रसिद्ध हुए। स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज ने केवल सिंध देश के ही गाँवों में ज्ञान की ज्योति जगाई हो- ऐसी बात नहीं थी, वरन् पूरे भारत में एवं विदेशों में भी सत्शास्त्रों एवं ऋषि-मुनियों द्वारा दिये गये आत्मा की अमरता के दिव्य संदेश को पहुँचाया था। उन्होंने पूरे विश्व को अपना मानकर उसकी सेवा में ही अपना पूरा जीवन लगा दिया था। वे सच्चे देशभक्त एवं सच्चे कर्मयोगी तो थे ही, महान् ज्ञानी भी थे। (क्रमशः)

भावनगर से अमदावाद होते हुए पूज्यश्री एकांतवास के लिए हिम्मतनगर पधारे।

वीरपुर : हिम्मतनगर के एकांतवास के दौरान् भी वहाँ से १५० कि.मी. दूर बालासिनोर के पास स्थित वीरपुर के भक्त श्री सुरेशानंदजी के कार्यक्रम के बाद पूज्यश्री का एक दिवसीय सत्संग कार्यक्रम पाने में सफल हुए। दिनांक : ७ दिसम्बर '९७ को पूज्य बापू के सत्संग में विशाल पण्डाल भी खचाखच भर गया था। शाम के सत्संग के पश्चात् वहाँ के भाविक भक्तों एवं समिति के आग्रह के वशीभूत होकर दिनांक : ८ दिसम्बर को भी पूज्यश्री के मुखारविंद से निःसृत सत्संगामृत का पान करने का सौभाग्य वीरपुरवासियों को मिला।

भेटासी : वहाँ से दिनांक : ८ दिसम्बर को ही पूज्यश्री भेटासी (जि. खेड़ा) आश्रम पधारे। मार्ग में आते समग्र लुणावाड़ा आश्रम एवं निर्माणाधीन गोधरा आश्रम की भूमि को अपनी चरणरज से पावन करते हुए पूज्यश्री भेटासी आश्रम पधारे। वहाँ भी इस अलख के औलिया के दर्शन के लिए बड़ौदा एवं भेटासी के हजारों भक्त पलकें बिछाये राह देख रहे थे। शाम भेटासी आश्रम में पूज्यश्री का सत्संग हुआ।

बड़ौदा एवं पादरा के भक्तों ने जिस श्रद्धा-भक्ति से सत्संग के लिए प्रार्थनाएँ कीं एवं चक्कर खाये हैं उसे देखकर उनके पवित्र उद्देश्य की पूर्ति कम समय में ही हो जायेगी - ऐसा प्रेमभरा आश्वासन पूज्यश्री ने दिया। बड़ौदा एवं पादरा के भक्तों को जाहिर सत्संग मिल जायेगा।

वापी : तत्पश्चात् पूज्यश्री वापी आश्रम में पधारे। दिनांक : ११ दिसम्बर '९७ को यहाँ से २६ कि.मी. दूर स्थित पर्वतीय आदिवासी क्षेत्र बोन्टा में विशाल भण्डारे का आयोजन हुआ जिसमें हजारों-हजारों आदिवासी गरीबों में अनाज, वस्त्र, बर्तन, साबुन एवं अन्य जीवनोपयोगी वस्तुओं के साथ नकद दक्षिणा का वितरण भी किया गया। यहाँ दूर-सुदूर से आये हुए हजारों आदिवासियों में जीवनोपयोगी वस्तुओं के साथ उनकी आध्यात्मिक प्यास मिटाने के लिए पूज्यपाद सद्गुरुदेव ने उन्हें अपनी अमीमय दृष्टि एवं अमृतमयी वाणी से सत्संग-सरिता में सराबोर कर दिया। वे लोग प्रभुनाम, रामनाम का जप कर सकें इसलिए उन्हें मालाएँ भी दी गयी थीं।

सत्संग के पश्चात् सबमें भोजन-प्रसाद का वितरण हुआ। इस भण्डारे को देखकर लोगों को ऐसा लगा कि जिस बोन्टा प्रदेश की ओर कोई देखता तक नहीं है उसका ध्यान पूज्य बापू जैसे ईश्वरप्राप्त संत द्वारा ही रखा जाता है। समस्त आदिवासियों में आनंद की लहर छा गयी थी।

दिनांक : १२ से १४ दिसम्बर '९७ तक वापी (डुँगरा) आश्रम में सत्संग समारोह का आयोजन हुआ। यहाँ दिनांक : १२ दिसम्बर को विशाल मानव समूह की उपस्थिति में पूज्यश्री के पावन करकमलों द्वारा शंखनाद करके नवनिर्मित आर. सी. सी. के पक्के सत्संग हॉल का उद्घाटन हुआ।

नये सत्संग हॉल के उद्घाटन के प्रसंग पर भक्तों एवं बुद्धिजीवियों को लगा था कि यह संकुल वापी एवं आसपास के इलाकों के भक्तों के लिए आशीर्वादरूप है कि जहाँ पर भक्तगण अपनी आध्यात्मिक ज्ञान-पिपासा को परितृप्त कर सकेंगे। इस शुभ अवसर पर वापी क्षेत्र के सांसद श्री हीराभाई चौधरी भी उपस्थित थे। इसके अलावा समाजसेवी संस्थाओं के अग्रगण्य एवं नगराध्यक्ष ने भी पूज्यश्री के सत्संगामृत का पान किया।

दिनांक : १४ दिसम्बर '९७ को पूर्णिमा के दिन समग्र देश में से हजारों पूनमव्रतधारी साधक यहाँ उमड़ पड़े थे। इसी दिन दोपहर २ बजे तक वापी

आश्रम में, तत्पश्चात् सागर-तट तिथल में संध्या के समय साधकों के लिए विशेष 'मिनि शिविर' का आयोजन हुआ । वहाँ का तो वातावरण ही कुछ निराला था । लाखों-लाखों भक्तगण... संध्या का समय एवं सागर का तट... और इसमें भी पूज्य बापू जैसे वेदांतनिष्ठ संत का सान्निध्य... फिर बाकी ही क्या बचे ! विदाई के समय भक्तों के लिए खीर के प्रसाद की भी सुंदर व्यवस्था की गयी थी।

यहाँ से पूज्यश्री ने सूरत आश्रम के लिए प्रयाण किया।

सूरत : यहाँ तो दिनांक : १४ दिसम्बर से ही अर्थात् शिविर के पहले से ही देश-विदेश के हजारों भक्त उमड़ पड़े थे । दिनांक : १५ से १७ दिसम्बर के दौरान् आयोजित ध्यान-योग साधना शिविर में पूज्यश्री द्वारा कुंडलिनी योग, नादयोग, राजयोग वगैरह का प्रयोगात्मक प्रशिक्षण एवं जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए सत्य का ज्ञान एवं समझ सत्संग के माध्यम से दिया। यहाँ हजारों शिविरार्थियों के अलावा आम-जनता भी सत्संगामृत का पान करने के लिए उमड़ पड़ती थी।

दिनांक : १५ दिसम्बर को सूरत के पास स्थित स.यण गाँव में नवनिर्मित विशाल शिवमंदिर (जिसका भूमिपूजन भी पूज्य बापू द्वारा ही हुआ था) की प्राणप्रतिष्ठा पूज्य बापू के पावन करकमलों द्वारा संपन्न हुई। यहाँ उपस्थित जनता को पूज्यश्री के सत्संगामृत का पान करने का सुअवसर भी मिला था। इस शिवमंदिर का नाम पूज्य बापू द्वारा 'रामेश्वर मंदिर' रखा गया।

दिनांक : १८ दिसम्बर '९७ को दोपहर में सूरत के 'संत श्री आसारामजी टेक्सटाइल मार्केट' का उद्घाटन भी पूज्यश्री के करकमलों द्वारा हुआ। यहाँ पूरे सूरत के इतिहास में यह पहला ही ऐसा अवसर था कि जिसमें इतनी विशाल संख्या में जन-समुदाय किसी मार्केट के उद्घाटन में उपस्थित हुआ हो ! यहाँ भी जनता को पूज्यश्री की पीयूषवर्षी वाणी का रसपान करने का सौभाग्य मिला।

यहाँ से पूज्य बापू ने धुलिया के लिए प्रस्थान किया किन्तु धुलिया के मार्ग में आनेवाले गाँवों के भक्त भला कहाँ चुप बैठनेवाले थे ! बारडोली, व्यारा एवं साकारी गाँव के भक्त भी पूज्य बापू की अमृतवाणी का लाभ लेने में सफल रहे।

धुलिया : यहाँ दिनांक : १७ एवं १८ दिसम्बर '९७ के दौरान श्री सुरेशानंदजी के सत्संग के पश्चात् दिनांक : १९ से २१ तक योगेश्वर पूज्य बापू के द्वारा ज्ञानामृत परोसा गया।

धुलिया के इतिहास में यह पहला प्रसंग था जिसमें इतनी बड़ी संख्या में एकत्रित होकर लोगों ने आत्मनिष्ठ संत के रसामृत का पान किया था। यहाँ तो प्रतिदिन, प्रत्येक सत्र में मण्डप बढ़ाना पड़ता था !

यहाँ दिनांक : १७ दिसम्बर '९७ को सुबह के सत्र में विद्यार्थियों के लिए विशेष सत्र का आयोजन हुआ जिसमें २५ हजार विद्यार्थियों ने सबके लाडले पू. बापू के अनुभवयुक्त अमृतवचनों के रूप में तेजस्वी-ओजस्वी बनने के प्रयोगों को शांतिपूर्वक सुना।

दिनांक : २० दिसम्बर '९७ को सिंधी भक्तों के अत्यंत भावपूर्वक आग्रहवशात् सिंधी कॉलोनी में भी शाम को ८ से १० के दौरान् भक्तों को ज्ञान-भक्ति के अमृतपान का अवसर मिला।

यहाँ त्रिदिवसीय सत्संग समारोह से ऐसा लगता था मानो पूरा धुलिया शहर हरिमय होकर मानो 'हरि नगर' बन गया हो ! अंतिम दिवस तो सभी पार्टी के नेताओं ने एक साथ ही पंक्ति में बैठकर सत्संग-अमृत का पान किया।

दिनांक : २१ दिसम्बर '९७ को यहाँ के दोपहर के ज्ञानसत्र की पूर्णाहुति के बाद पूज्य बापू ने विशेष वायुयान द्वारा छिंदवाड़ा के लिये प्रस्थान किया।

[पू. बापू के सत्संग कार्यक्रम की सूची पृष्ठ ११ पर]

*

(पृष्ठ ४ का शेष)

ढालने का प्रयत्न करो। अपने हृदयस्थ प्रभु को प्यार करते-करते उसीमें विश्रान्ति पाते जाओ । इससे तुम्हारा हृदय मधुर, शांत एवं प्रसन्न होता जायेगा और तुम हृदयेश्वर के प्रसाद को पाने में सफल हो जाओगे।

डुँगरा (वापी) आश्रम एवं नवनिर्मित पक्के सत्संग हॉल के अनावरण प्रसंग पर लाक्षणिक अनोखी अदा में पूज्य बापू। इस सुअवसर पर मंगल आरती करते हुए भाविक भक्त।

मधुर कीर्तन की मस्ती में मस्त पूज्य बापू एवं भाविक भक्त, डुँगरा (वापी) आश्रम
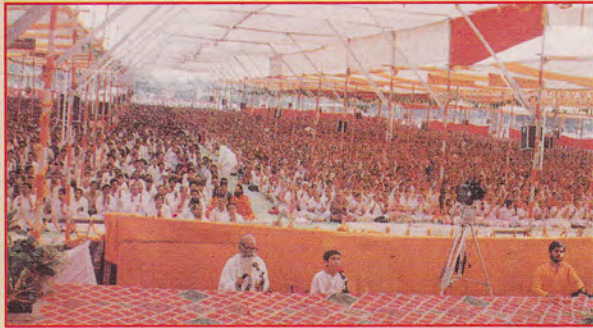
पूज्य बापू के केवल एक ही दिन के सत्संग में भी इतनी विशाल जनता एकत्रित हुई ! - वीरपुर (बालासिनोर)

नब्बे साल की उम्र में भी श्रीमती मोतीबाई (उदयपुर) उग्रासन करके सर्वांगी स्वास्थ्य प्राप्त कर रहे हैं।